आम्रपाली

काव्यकार

पोद्दार रामावतार अरुण

किरण प्रकाशन
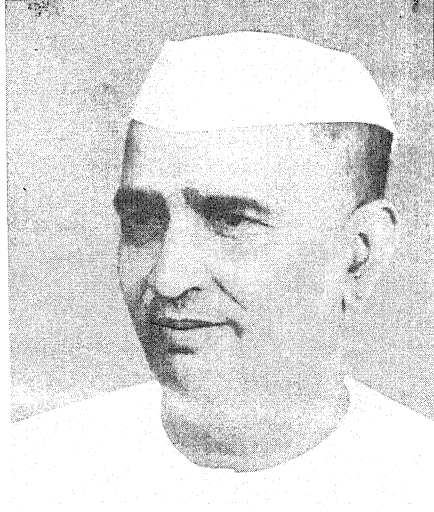
राजर्षि जनक-स्मृति-समारोह के मुख्य संरक्षक

श्री ठाकुर प्रसाद शर्माजी

की पुण्य स्मृति में

मित्रवर श्री मदन मोहन शर्मा

को

सादर सप्रेम भेंट
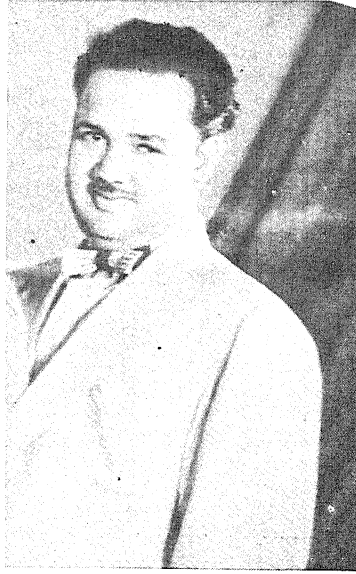
श्री मदन मोहन शर्माजी

सुर-शृङ्गार

भारतीय विविध भाषाओ मे वैशाली की विख्यात सुन्दरी राजनर्त्तकी अम्बपाली पर अनेकानेक साहित्यिक रचनाएँ हुई है। मेरे घर के सामने बहनेवाली गडकी की उभरी हुई जिन्दगी ने एक दिन पूर्वीय आसमान पर उगते हुए इन्द्र-धनुष को देखकर कहा कि मेरी धारा वैशाली की पवित्र भूमि को छूती हुई आई है !

कार्तिक पूर्णिमा का चॉद अभी उगा ही नही कि मैने अपनी 'आम्रपाली' को आते देखा। सौन्दर्य की प्रतिमा मेरी कल्पना के मदिर मे खडी हो गई। चहकती सध्या मे एक चिराग जलाकर मैने मिथिला की आँखो से वैशाली की कला-देवी को पहचाना। लगा, कि वह पहले की जानी-पहचानी है। वह मेरी भाषा समझ गई और मेरे सामने नाचने लगी। ग्यारह दिनो तक मै उसके नृत्य मे विभोर रहा। और, एक दिन मैने देखा कि राजगृह की पहाडियो मे मेरी 'आम्रपाली' खो गई ! मै उसका सर्वस्व लेकर लौट पडा। गडकी-तट पर एक कूकती हुई कोयल ने कहा कि वसन्त आ गया। दूसरे ही दिन मैने देखा कि उद्यान की सभी टहनियाँ कलियो को गुदगुदा रही है !

'आम्रपाली' की रचना ज्ञान के लिए नही, आनन्द के लिए हुई है। इसकी सफलता के हाथ मे ओस से भीगे हुए शृगार की कुछ अधखिली अचुम्बित कलियाँ है, जिनकी सुरभि मे भगवान बुद्ध की रेशमी किरण व्याप्त है ! जिन्दगी की झकार मुस्कान से उठकर दर्द मे छुप गई है। फिर भी उसकी आवाज मे कम माधुर्य नही। मुझे विश्वास है कि 'आम्रपाली' सबको अपनी ओर कुछ-न-कुछ खीच लेगी।

कविता की मृत्यु की बाते सुनी जाती है। मरनेवाले केवल मौत की ही कल्पना करते है। भारतीय कविता जिन्दगी लेकर आई है। जब तक हृदय की घटा का अस्तित्व है, कविता की नदी नही सूख सकती। मस्तिष्क का सूर्य भावना के जल को नही सोख सकता। उसकी ज्वाला से 'मेघदूत' का जन्म होता है। हृदय को समाधि मे छुपाकर बुद्धि चैन नही पा सकती। चेतना का दिनमणि चॉद का शृगार करता है

डूबते हुए सूरज ने कहा सितारो से
आओ, छाओ, मै दूर देश को जाता हूँ

है देर चाँद के उगने में, तुम चमक उठो,
मैं आसमान का चक्कर देकर आता हूँ !

जिस दिन कविता की धारा रुक जाएगी, मनुष्यता चीख उठेगी। प्राणो के सगीत को त्यागकर क्या मानव जी सकेगा ? उपन्यास और गल्प कविता के आशीर्वाद से जीवित नही ? ससार के महान् वक्ता कविता की चिनगारी से सिह-गर्जना करते है। कविता इसलिए नही मर सकेगी कि यह प्रत्येक व्यक्ति मे छुपी हुई है। विश्व के सभी श्रेष्ठ उपन्यास, काव्य की गहराई मे डुबकियाँ लगाकर अपनी अमरता की प्रकाश-घोषणा करते है। छन्द की नैसर्गिक मुक्ति से शुष्क गद्य का उत्तरदायित्व बढ गया है। भाषा के वृन्त पर खिली गद्य की कली मे जिस समय खुशबू का जन्म हो जाता है, उसी क्षण साहित्य मे कविता की पायल बजने लगती है !

'आम्रपाली' प्रेम-प्रधान काव्य है। करुणा के आलोक मे इसका स्वर्णान्त हुआ है। सीधी-सादी भाषा मे कल्पना के मन की भावना व्यक्त हुई। अत साधारण पाठक भी इसके सपने मे प्रवेश कर सकेगे—ऐसा मेरा विश्वास है। फिर भी, इसकी कला मे उतनी सादगी शायद नही। प्राय प्रत्येक चित्र के पीछे प्राणो की सूक्ष्मता का तरगित सगीत है। नाटकीय भावो का उत्थान-पतन हर सर्ग मे है।

ऐतिहासिक 'आम्रपाली' साहित्य की कुसुमित शय्या पर सोकर नीद मे खो नही गई। उसकी आँखो मे कुछ-न-कुछ नई रोशनी आई ही है। उसने अपने युग को स्पष्ट कह दिया

वैशाली की एकता आम्रपाली मे है
नीला-नीला आकाश इसी लाली में है !

सम्पूर्ण काव्य मानवीय सहज दुर्बलता और सबलता से प्रतिध्वनित है। आम्रपाली की जिन्दगी कोमलता की उस कमलिनी पर खडी है, जिसके चारो ओर भीषण परिस्थिति की ज्वाला उठ रही है। उसी ज्वाला के मध्य मे उसकी कलात्मक बहार की कोयल कूकती है। धूप-छाँह की तरह सुख-दुख की यवनिका उठती-गिरती है। भगवान बुद्ध और आम्रपाली का मिलन सत्य और सौन्दर्य का मिलन है। दो बार भगवान आए और दोनो बार आम्रपाली प्रसन्न हुई। पर दोनो अवसर पर एक ही तरह के अश्रु नही गिरे। बहार मे आई हुई कोयल बरसात की गहराई मे चुप हो गई !

'चन्द्रकेतु' वैशाली का एकान्त साधक कलाकार है, जो अपनी स्वतन्त्र महिमा की मर्यादा से दीप्त है। उसकी मौन साधना के कला-कक्ष मे कर्त्तव्य

का ऐसा प्रदीप जलता है, जिसे कोई तूफान नही बुझा सका। वह एक ऐसा पागल था, जिसकी आँखो मे पवित्र चेतना की ज्योति थी। उसके वाह्य अन्धकार के पीछे किरण ही किरण थी।

'स्वर्णभद्र' एक ऐसा नगर-शिल्पी है, जिसने परिस्थिति के आगे अस्तित्व खोकर सिर झुका दिया। पर उसके प्राणो मे जिन्दगी की आवाज मिटी नही—ऐसा भी नही कहा जा सकता। क्योंकि उसके मस्तिष्क मे सोने की प्रभुता विकसित हो गई। उसकी 'रूपा' निर्मलता और त्याग की प्रतिमा है, जो आम्रपाली के हृदय पर चिता जलाकर अमर हो जाती है!

पुस्तक के प्राय सभी पात्रो मे अपनी-अपनी सुगन्ध है। कुल मिलाकर 'आम्रपाली' एक ऐसी वाटिका है, जहाँ हर मौसम की कलियाँ खिलती हैं। 'आम्रपाली' एक ऐसी बहार है, जिसके ऊपर पावस का पहरा होता है। तब तो वह कहती है

हे मेघ ! प्राण की धरती पर आया न करो
आकाश सजल यों ही है, तुम छाया न करो !

यह कह देना अनिवार्य है कि इस काव्य प्रबन्ध मे वैशाली की राजनीति की पर्याप्त चर्चा इसलिए नही की गई है कि अधिक लपट उठने से इसकी सुकुमारता पर आघात न पहुँचे। 'आम्रपाली' दुर्गा की प्रतिमा नही, सरस्वती से मिलती-जुलती एक मानवीय तस्बीर है, जो तलवार को उठाना पाप समझती है! उसकी कला-वीणा ही अवसर पाकर झकार की आग उगलती है।

मेरी 'आम्रपाली' कितनी अपनी है, इसे व्यक्त करना विनम्रता का अपराध है। फिर भी, यह कह देना सीमा के बाहर जाना नही प्रतीत होता कि 'आम्रपाली' कविता ही कविता है। इसके जीवन का गद्य उतना ही दूर है, जितना काँटो से फूल। कहने का तात्पर्य यह है कि चाँद की सुन्दरता कविता की झूमती निर्झरिणी मे मिलकर अन्दाज की आँखो मे खुशबू भर देती है!

इस ग्रथि की सबसे नैसर्गिक सफलता शायद यही हुई है कि प्रत्येक सर्ग का क्रमिक विकास हुआ है। किसी भी स्थल मे शास्त्रीयता का बोझ नही पडा। कातिक की चाँदनी रात मे बहती हुई नदी की तरह इसकी भाषा या प्रभात की फूटती हुई किरण की भाँति इसके भाव है कि नही, इसकी पहचान रचयिता कैसे करे? शुद्ध भारतीयता की मिट्टी पर मेरी उन्मुक्त कल्पना ने हृदय से निकली हुई आवाज की पूजा की है, जिसकी खुशी ही यह 'आम्रपाली' है। सामने उगी हुई पूर्णिमा को देखने मे मै इतना विभोर हूँ कि दाग दिखलाई नही पडते। चाँद

मे तो दाग है ही , उन्हे देखकर मुझे क्या मिलेगा ? कागजवाली आँखे भी तो अच्छी लगती हे अगर उनमे चरित्र की चचलता हो ।

मुझे विश्वास है कि सबल नेत्रवाले उदार पाठक काँटो को नही देखकर दुर्बल उँगलियो से निर्मित कला के अधखिले गुलाब को ही देखे, जिन पर मेरी प्रार्थना के हिमकण और प्रसन्नता की सूर्य-किरण इन्द्र-धनुप की तरह चुप है। जय भारती !

बसन्तपंचमी, १९५६

प्रथम सर्ग

जिस समय किशोरी गोरी
थोडी दूर निकल जाती घर से,
घिर-घिर जाती पहचानी वीणा के स्वर से
जैसे बादल मे चॉद, विपिन मे हिरण
नयन मे रूप, प्राण मे दर्द कैद हो जाता है
तूफान जगाकर कलियो मे चुपचाप भ्रमर सो जाता है
पर नीद न आती गधमयी पखडियो मे
कोई भी सोता नही प्यार की घडियो मे
मन बँध जाता है फूलो की हथकडियों मे !

वह रुक जाती
कुछ झुक जाती
फिर खिल जाती सगीत-पवन-हिलकोरो से
हिल जाती है हर सॉस प्रणय-झकझोरो से !
उस समय जवानी आँखो मे आ जाती है
दिन के दर्पण मे अनायास चॉदनी एक छा जाती है !
आकर्षण का तूफान आज तक रुका नही
दुनिया मे केवल प्रेम कभी भी झुका नही !

रुक गई आम्रपाली देखो,
उस कलाकार के स्वर मे कितनी माया है

आ गया कौन उसके सम्मुख ?
सुन्दरता की कितनी मनमोहक छाया है !

डूबते हुए सूरज ने कहा सितारो से
आओ, छाओ मै दूर देश को जाता हूँ
है देर चॉद के उगने मे तुम चमक उठो
मै आसमान का चक्कर देकर आता हूँ !

तब कलाकार उस चन्द्रकेतु ने दीप-शिखा को चूम लिया
कसकर बॉहो मे आग, लुटा दी एक रोशनी प्राणो मे
जीवन मे पहली बार जीत मे हार हुई
चिनगारी उडने लगी विकल अरमानो मे !

उस बहती वेगवती-तट पर जब चॉद उगा,
हो गई किशोरी युवती जग की आँखो मे
भर गई एक गुदगुदी वक्ष मे प्रथम बार
आँधी-सी एक उठी खजन की पॉखो मे !
लज्जा का जनम हुआ यौवन के आते ही
हो गया प्राण मे दर्द चॉदनी छाते ही !

वह भूल गई गागर भरना
मॉ से डरना
खो गई कूल पर धूलो मे
वह लिपट गई सुधियो के खिलते फूलो मे !
जिन्दगी चहकने लगी
मधुर वह मदिरा कैसी थी कि
आँख भी अधिक बहकने लगी
सॉस भी बहुत गमकने लगी

रूप की रानी क्यो, किसलिए
अधिक से अधिक चमकने लगी !

चेतना एक उतरी, बिखरी
बोली वह—अब मैं जाती हूँ
रूपा ने आते देखा था
वह सोच रही होगी क्या-क्या !
कल तक तो गलत सोचती थी
पर आज ?
आज तो ठीक सोचती होगी वह !
देखो मेरी चन्द्रमा, दाग तो नही लगा ?
लेकिन सुन लो
रूपा का प्रेम न कुछ भी कम है पाली से
वह भी तो सुन्दर है—
गाती, अँगराती है
सच कहती हूँ हे चन्द्रकेतु !
वह बहुत, तुम्हारे लिए बहुत अकुलाती है !
मैं रोई नही कभी भी
वह तो रोती है
कहती थी, कभी-कभी न रात में सोती है !
मैं उसका प्यार चुराकर चैन न पाऊँगी
वह रोएगी तो मैं कैसे मुसकाऊँगी ?
उसकी भी तो तस्वीर बनाई है तुमने
औ' मेरी भी !
बेचारी के माँ-बाप नही है
काका-काकी है केवल !
तुम प्रेम उसीसे करो

मुझे तुमसे ज्यादा है प्रेम तुम्हारी वीणा से
मै कठ और तूलिका तुम्हारी ले लूँगी।
तुम मुझे कला दो, रूपा को दो कलाकार
झकार मुझे दो और उसे दो मधुर प्यार!
मै नही चाहती उसके भीगे रहे गाल
हे चन्द्रकेतु, मै नही बनूँगी कभी व्याल।
नारी को नेह नही तो कुछ भी नही कही
करुणा मे ही नारी की आत्मा रहती है
अबला क्या कभी किसी से कुछ भी कहती है?
तुम मुझे स्नेह दो और उसे सिन्दूर-दान
तुम मुझे गान दो और उसे दो मुग्ध प्राण।
कल्याण इसी मे है हे कोमल कलाकार।
झाँकू मै केवल द्वार, उसे ही मिले प्यार
वह रोज गूँथती है आँसू का मृदुल हार।
उपहार उसे ही दो, पुकार मै माँग रही
तुम प्यार उसी को दो, दुलार मै माँग रही!
दो उसे नीद, मै सपने को ही ढो लूँगी
तुम उसे हँसी दे दो, मै सुख से रो लूँगी।
दो मुझे एक चिनगारी, उसे चमन दो
रूपा को अपने फूलो का ही वन दो।
तुम मुझे तिमिर दो किन्तु उसे उजियाली
जिन्दगी काट लेगी अपनी अम्पाली।
प्रार्थना हृदय की सुनो सहर्ष चितेरा,
ऐसा न कही हो, हो जाए अन्धेरा!
फिर मै तो फेकी हुई एक कन्या हूँ
अमराई मे मिलनेवाली वन्या हूँ।
किसकी शकुन्तला हूँ यह कैसे जानूँ
वैशाली की मेनका किसे मै मानूँ?

हूँ निर्धन, मेरे पिता हो गए अन्धे
माँ के सँग करती हूँ खुद घर के धन्धे ।
वह तुम हो जिसने गीत मुझे सिखलाया
नित कला-ज्वार से तट मेरा टकराया !
प्रिय वेणुग्राम वैशाली की सुषमा है
यह है गाँवो का गाँव, यही उपमा है !

सुनकर सारी बाते, आघाते सहकर भी
उस चन्द्रकेतु ने कहा—अहा !
कितनी अच्छी है रात
जरा ऊपर भी तो देखो आम्रे !
अम्बर मे तारो का है मेला लगा हुआ
पर चाँद चमकता है सबसे ज्यादा,—
उसकी चाँदनी भूमि पर लोट रही
इसलिए कि वह नजदीक बहुत है धरती से
धूलो मे उसकी माया मिलनेवाली है
फूलो मे उसकी छाया खिलनेवाली है !
तारे है बहुत दूर नभ मे
इसलिए तुहिन बिखराते है
चाँदनी चाँद ही देता है
इसलिए फूल इतराते है ।
तुम क्या जानो तुम कौन
मौन ही रहने दो सुन्दरता को
निर्मलता क्या जाने अपनी चचलता को !
जो कलाकार की वीणा से टकरा जाती
है वही राग की रानी भी
जो मेरी साँसो मे भर जाती है जादू
है वही प्रीत की वाणी भी ।

तुम कितनी अच्छी हो आम्रे !
बातो से प्राण हिलाती हो
प्रतिपल सुर मे ही गाती हो !
नूपुर मे ऐसी ही झकारे आने दो
समझोगी सब कुछ, जरा बहारे आने दो !
यौवन तो पहला चरण आग पर रखता है
तुम प्रथम-प्रथम करुणा को ही देखने लगी ?
नयनो से अब तक तीर नही निकला कोई
सगीत नम्रता भर देता है जीवन मे !

रूपा तो सीधी-सादी है
गगा की धारा-सी पवित्र
यमुना की तरह नही चचल !
मै छाया खोज रहा आम्रे,
जो नाचे, गाए सग-सग !
मै युवक तरगो पर ही बहनेवाला हूँ
सौ-सौ ज्वारो की चोटे सहनेवाला हूँ
अँधियाली हो या उजियाली इसकी न फिक्र
चोटी पर चढकर ही कुछ कहनेवाला हूँ !
जीवन मे जब लहरे आती है बार-बार
वीणा पर तभी उँगलियाँ भी तो चलती है
जब बहुत तेज चलता है साँसो का समीर
तब प्राण-शिखा भी बहुत तेज से जलती है !
क्या जाने क्यो मै खो जाता हूँ तुम्हे देख
किसलिए आँख मेरी इतनी अकुलाती है
मेरे सपने की आम्रवाटिका मे कब से
घोसला बनाकर कोई बुलबुल गाती है !

रूपा तो वैभववाली है
पक्का मकान मे रहती है
उद्यान-कुज मे बैठ पोथियाँ पढती है
सँगमर्मर की दीवारो के भीतर ही नाचा करती है
रगीन कक्ष मे गाती है सगीत
प्रीत कैसे हो सकती है मुझसे ?
मेरा तो कोई नही,
नाव-दुर्घटना मे बह गए पिता, तुम जान रही
खो गई नम्र माता गगा की धारा मे
छोटी थी एक बहन वह भी .. ।
आम्रे ! मै तो एकाकी हूँ
किस आँधी से टकरा जाऊँ
वह एक विहग मै बाकी हूँ ।
आता है कभी-कभी मन मे, मै भिक्षु बनूँ
भगवान बुद्ध के पावन चरणो मे गिर जाऊँ एक बार
पर एक आग जलती है मेरे भीतर मे
ज्वालाएँ जलते नयनो से आँसू निकाल देती रह-रह
देखो, अब भी मेरी आँखो मे तुम्ही एक !
जब से वैशाली से आया हूँ यहाँ सीख कर कला
तुम्हारे जीवन ने कुछ ऐसी भाषाएँ भर दी—
कुछ ऐसी आशाएँ भर दी,
तूफान उठ गया मेरे प्राणो के घर मे
सगीत आ गया मेरी साँसो के स्वर मे ।
तुम जनम-जनम की ही जानी-पहचानी हो
जीवन-प्रवाह पर बहनेवाली मेरी एक कहानी हो ।
तुम भी मिट्टी के घर मे हो
मै भी मिट्टी के घर मे हूँ

जीवन के तुम जिस स्वर मे हो
जीवन के मै उस स्वर मे हूँ!
नगरी है मुझे पसन्द नही
सचमुच मै ग्राम-निवासी हूँ
सरसो मे रहनेवाला हूँ
अमराई का ही वासी हूँ!
कुछ तुम भी वैसी ही हो
खेतो मे हिलोर लेनेवाली
अपने ही हाथो से गायो को
घास-पात देनेवाली!
तुम गागर भरनेवाली हो इस वेगवती के कूलो पर
तुम बहुत झूमनेवाली हो पीले सरसो के फूलो पर!
तुम हरसिगार के नीचे मिट्टी पर भी हो सोनेवाली
तुम माटी के घर की कोयल हो पतझर मे रोनेवाली!
मतवाली! तुम्ही देख सकती हो मन के सभी सितारो को
तुम मृदुल बाहु मे भर सकती हो सौ-सौ खिली बहारो को!
तुम बिना दिए के सो सकती हो केवल एक चटाई पर
तुम मोती को बिखरा सकती हो चन्द्र-किरण-परछाई पर!
वह रूपा रजत-विनिर्मित है
तुम आम्र : प्रकृति की सुषमा हो
प्रिय रूपा व्योम-विहगिनि है
तुम इस धरती की उपमा हो!
वह वैशाली के कलाकार उस स्वर्णभद्र की बेटी है
इस वेणुग्राम मे बैठी है पर वह नगरो मे लेटी है! × ×
रूपा को तुम नही जानती, वह सोने की काया है
जो कुछ देख रही हो तुम, सब मिथ्या है, सब छाया है!
कचन की माया कैसी है अब तो जान गया हूँ मैं
गाँवो मे बसकर नगरो को अब पहचान गया हूँ मैं!

मदिरा मुझको नही चाहिए, मुझे नदी का पानी दो
पेडो मे, पत्तो मे छुपती हुई अनन्त कहानी दो!
धनखेतो पर छानेवाली घटा निराली होती है
देखी है तुमने असाढ मे कितनी काली होती है!
आम्रकुज के शिखर-शिखर पर बिजली जब अकुलाती है
तब वसन्त की कोयल भी वर्षा मे आकर गाती है!
कातिक की चाँदनी रात मे चाँद देखता रहता हूँ
मन मुझसे कुछ कहता है, मै भी मन से कुछ कहता हूँ!
रूपा के शिल्पी चाचा तो
सामन्तो के पिट्ठू है
चित्रावलि, मूर्त्तियाँ उन्ही की सदा बनाते रहते है
केवल एक चित्र है उनका जो कि कला की आभा है
रगो की जमीन पर सचमुच स्वर्ग उतर कर आया है!
स्वर्णभद्र है अमर, एक तस्वीर बहुत ही अच्छी है
किन्तु सोमरस पीनेवाले वे कुछ सपने देख रहे,
रूपा होगी राजनर्त्तकी! आम्रे, यह तुम जान रही?

राजनर्त्तकी, रूपा?
तब तो बडी भाग्यशाली है वह!
सच है वैभववाली वैभव-गृह मे जाकर रहती है,
आसमान के तारे आपस मे ही प्यार लुटाते है
ऊपर के रहनेवाले ऊपर ही ऊपर गाते है!
चन्द्रकेतु! मै जान गई, अपने घर को पहचान गई
जो कुछ तुम कहते हो उसको कुछ-कुछ तो मै मान गई!
फिर ऐसी है बात कौन
जो रूपा रह-रह रोती है
याद तुम्हारी करती है
आँसू लेकर ही सोती है!

वह तो तुम्हे चाहती है
खो जाती है हरियाली मे
नीर छीटती है निशि-दिन
अपनी साँसो की डाली मे !
कैसे कहूँ कि रूपा के आँसू न प्राण से आते है
यो ही नही नयन मे काले बादल आकर छाते हैं !
मै जब तुमसे मिलता हूँ तब रूपा क्यो घबरा जाती
घोर घटा से उसकी आँखे बरबस क्यो टकरा जाती ?
एक बार दर्पण के सम्मुख मेरे साथ खडी थी वह
पता नही क्यो, मेरी सुन्दरता को देख डरी थी वह !
चूम लिया था उसने सहसा मेरे गोरे गालो को
स्वय सँवार दिया था उसने मेरे बिखरे बालो को !
दर्पण को दिखला कर उसने मेरी छाती खोली थी
तिरछी आँखो की चमकीली उसकी डाली डोली थी !
मेरी सभी उँगलियो को देखने लगी मुस्काती-सी
मै तो देख रही थी अपनी विकल कली सकुचाती-सी !
उसी समय तुम आए थे, मै चली गई थी बारी मे
आम्र चयन कर लौट रही थी बादल की अँधियारी मे !
फिर तुमसे हो गई भेट, थी नग्न यूथिका की छाती
मै निज घर मे जला रही थी सध्या की पहली बाती !
अगर देख लेती मेरी माँ, पगली मुझको कह देती
कुछ भी मै उसको कहती तो क्या वह चुपके सह लेती ?
अच्छा हुआ कि तुम आए, मै देख सकी पागलपन को
हँसकर तुमने बता दिया मेरे इस नगे यौवन को !
उसी रात,
मै सच कहती हूँ
एक स्वप्न भी आया था
फूलो का तूफान सुप्त इन प्राणो से टकराया था !

ऐसा भी सपना होता है?
छि लज्जा आ जाती है!
नगी भी होकर दुनिया मे कोई नारी गाती है?
सुनती हूँ जब वत्ती बुझ जाती तब सपने आते है
भूत नीद के महलो मे अपना जादू फैलाते है!
अब तो विना चिराग जलाए कभी नही मै सोती हूँ
अगर दीप बुझ जाता है तो उठकर चुपके रोती हूँ!
एक रोज सपना देखा था
मै राजा की रानी हूँ
बहुत क्रुद्ध हूँ, मधु पीती हूँ
बातो की अभिमानी हूँ!
घोडे पर चढकर शिकार करती हूँ जगल-झाडी मे
चिडियो से मै खेल किया करती हूँ निज फुलवारी मे!
दुनिया मे कैसे-कैसे ये सपने आते-जाते है
नीद टूटने पर ही चचल नयन वहुत अकुलाते है!
कहाँ गाँव की रहनेवाली, स्वप्न देखती रानी का
नीद पकड़ लेती है आँचल नभ की चन्द्र-कहानी का!

अच्छा तो मै चली
भरी गागर को रख आऊँ घर पर
माँ तो आज सुनाएगी कुछ बडी-बड़ी बाते सुन्दर!
सुद्धी है वह,
कहती है—आम्रे! अब इतना मत खेलो
वाग-बाग मे मत घूमो, दिन चले गए अब कौतुक के
अधिक देर तक नही नहाओ वेगवती की धारा मे!
हुई सयानी लडकी तुम, अब मत जाओ अँधियाली मे
धीरे-धीरे चलो सुबह की भीगी-भीगी लाली मे!

किन्तु तुम्हारी वहुत वडाई करती है मेरी माता
कहती है प्रिय चन्द्रकेतु से . ...(नाता !)
नही, नही, वह कहती है, तुम पागल हो
तुम निष्ठुर हो
तुम झूठे हो
तुम यह वह, क्या-क्या हो, ऐसे हो, वैसे हो
सचमुच तुम कितने अच्छे हो, तुम कैसे हो !

चल पडी आम्रपाली इतना कहकर, हँसकर
औ' चन्द्रकेतु देखता रहा गति का जीवन
देखता रहा अल्हड यौवन का चपल चरण
सुनता रुनझुन-रुनझुन-रुनझुन नूपुर-गुजन !

वह चली गई गागर लेकर
लहराता-सा सागर लेकर
सूनी सरिता पर खडा गगन का चॉद,
भूमि पर चन्द्र !
किन्तु चॉदनी एक ही फैली है मन-प्राणो पर,
सुधियो के लाखो फूल बरसते है झर-झर
ऑखो के आगे घिरे हुए तूफानो पर !

सगीत एक निकला
आम्रा लौटने लगी
जैसे बादल से निकल पडी चचल बिजली !
सागरवाली गागर आई
चॉदनी, चॉदनी की लहरो से टकराई
यह देख चन्द्र चल पडा
आम्र भी चली

इधर से उधर, गली से गली
दीपिका नही रात की जली

किसे मै कहूँ
नीद की नील नदी थी टेढी-मेढी बडी सुन्दरी
जसे कोई परी पॉख को फैलाकर उड रही !

आज तो तुम थे मेरे पिया
हिया भी धडक रहा, है फडक रही आँखे मेरी
रूपे ! तू तो निद्रा मे भी आ जाती है
मेरे समक्ष इतना क्यो घबरा जाती है ?
उस समय वहाँ तू क्यो आई
मै भी शरमाई,
पाई तो मैने निठुराई लेकिन तू
क्यो खडी-खडी देखती रही—
मेरी आँखो की अँगराई ?
अब फिर न कभी आना सपने की माया मे
क्यो आती है रोशनी छोडकर छाया मे ?
तू राजनर्त्तकी बनना चाह रही रूपे !
चूमेगी तेरे चरण कुमारो की आँखे
प्रिय क्यो करती है प्रेम 'केतु से जीवन मे ?
क्या इसीलिए कि कुमारो-सा ही इसका सुन्दर यौवन है ?
रूपो मे भी यह एक रूप है पौरुष का,
जिन्दगी रसो से सराबोर है, इसीलिए क्या—
भीख माँगती है अपनी अकुलाहट से ?
या तू ले ले या मै ले लूँ
है चाँद एक ही आँखो मे !
फिर वैशाली की नगरी मे जाने की क्यो कल्पना हुई ?

ऐसा क्यो सोच रहे चाचा ?
क्या उन्हे नही मालूम प्रेम की ये बाते ?
तू आग छिपाकर कहाँ रखेगी री रूपे ?
अब साफ-साफ कह दे मुझसे,
मै क्यो दुविधा मे रहूँ, सहूँ क्यो अग्नि-ज्वाल ?
तेरे कारण मै चन्द्रकेतु से क्षमा-याचना कर लूँगी
अपने आँचल मे आँसू ही आँसू जीवन मे भर लूँगी !
तू मेरी दीदी है—
प्राणो से अधिक मानती है मुझको
सीखा है मैने नृत्य तुम्हारे चाचा से
वैशाली के विख्यात कला-शिल्पी है वे !
रहते है केवल चार मास अपने घर पर
वे आते है तो तुरत बुलाते है मुझको
है याद, उन्होने मुझे कहा था—
आम्रे, तू तो चमकेगी
वैशाली के सुन्दर भविष्य को छू लेगी तू एक रोज !
कुछ पता नही, क्या अर्थ हुआ,
मै चन्द्रकेतु से पूछूँगी,
क्या रूपा से मै श्रेष्ठ नही नाचती ?—
नही गाती सुन्दर उससे मै क्या ?
पर राजनर्त्तकी कभी नही बन सकती मै
उस राजभवन से चन्द्रकेतु ही सुन्दर है !
यश से बढकर है प्रेम,
गाँव को छोड नही जाऊँगी मै !
रूपे ! तू ही जा, मुझे यहाँ ही रहने दे
जिस धारा पर बहती हूँ उस पर बहने दे !
तू बहुत नाज से पली, चली जा दीदी मेरी वैशाली
चचला आम्रपाली अपनी डाली की कोयल मतवाली !

द्वितीय सर्ग

जब घटा, घटा से टकराई
बिजली निकली
पी कहाँ !—यही दो शब्द गूँजने लगे सघन अमराई मे
छा गया अचानक अन्धकार सावन-संध्या-अरुणाई मे !
तब चित्रकार ने घर मे दीपक जला दिया
एकान्त कक्ष को ज्योति-सोमरस पिला दिया !
झिलमिल प्रकाश की नव तरग पर
दो पतग आए, टकराए ज्वाला से
जैसे पीनेवाला पागल वापस जाता मधुशाला से
उस जगह जहाँ जिन्दगी मौत मे मिलती है
ज्यो भीषण लू मे जलती कलियाँ खिलती है !

पूछती शमा परवाने से, क्यो इस समाधि मे आते हो
कैसा यह जलन तुम्हारा है जो खुद जलकर जल जाते हो ?
रे भला आग से फाग, राग मे यह विराग क्यो होता है
जीवन रे यह कैसा कि मरण के घर मे जाकर सोता है ?
सच है, ज्वाला का स्वाद जिसे मिल जाता है
जलने मे ही आनन्द सृष्टि का पाता है !

वीणा से सहसा सान्ध्य रागिनी निकल पडी
तब चन्द्रकेतु ने देखा

सम्मुख खिडकी पर है चॉद खडा
दरवाजे मे ठोकर दे जाती हवा
खिली जूही की मधुर सुगध——
सॉस को घेर लिया करती आकर
रागिनी वीन की फैल रही है दूर-दूर
लगता है जैसे एक हृदय दूसरे हृदय को बुला रहा
कोई रोकर चपचाप किसी को रुला रहा !

तव तो आई रूपा चुपके
गीले पथ पर कुछ रुक-रुक के !
है खडी सामने उसके
जिसके स्वर मे सब कुछ
घर मे जलता है आशा का एक दीप
झिलमिल प्रकाश के नीचे——
काली छाया पर सतोष एक
जिसके कपोल पर प्रणय-अश्रु का एक बूँद केवल——
इतनी ही पूँजी रूपा के भविष्य की है देखो !
पूजा की यह अधखिली कली है पडी हुई
यह चार बरस से ठीक वही है धरी हुई !
उस समय आम्रपाली तो विल्कुल बच्ची थी
चचल थी, उसकी उम्र बहुत ही कच्ची थी
पर रूपा समझ रही थी मन की भाषा को
वह जान रही थी भीतर की अभिलाषा को !
देखा था इन्द्रधनुष को अपनी ऑखो से
कुछ समझ गई थी उडकर आतुर पॉखो से !

उस दिन से विकल चकोरी आग चबाती है
जव चॉद देखती है, मोती बिखराती है !

ओ चाँद ! चाँदनी मिली मगर तुम मिले नही
मेरे अम्बर मे कभी किसी दिन खिले नही !
ठुकरा दोगे हे चाँद ! दर्द से भीगी विकल चकोरी को
इस घोर घटा मे आई हूँ, क्या नही समझते चोरी को ?
बीमार पडे चाचा घर मे
फिर भी मै यहाँ चली आई
मै रह न सकी घर मे क्षण भर
जब मेघ-रागिनी टकराई !
तुम कुछ भी मुझे समझ तो लो
क्यो आती हूँ, क्यो जाती हूँ
अब कब समझोगे प्राण,
दर्द से क्यो इतनी अकुलाती हूँ !
मै बोल नही सकती कुछ भी
अब इतनी पीडा होती है
सच कहती हूँ हे चाँद
न रूपा कभी रात मे होती है !
आँसू की धारा से जब-जब
बिजली आकर टकरा जाती
उस समय तुम्हारे ही सम्मुख
कुछ रोती-हँसती आ जाती !

जिस दिन तुम मुस्का देते हो
मै आसमान छू देती हूँ
अपने इस नीले आँचल मे
सौ-सौ तारे भर लेती हूँ !
मै नही रोक पाती हूँ
उठते हुए प्राण के ज्वारो को

मैं फेंक दिया करती अपने
मन की समस्त झंकारों को! ......

जब हुई रागिनी शेष
चन्द्र ने देखा रूपा आई है
मुस्कान भरे स्वर में बोला—बैठो रूपे!
बोलो, वीणा किस तरह बजी
किस तरह सजी रागिनी विकल उँगलियों से
झंकार घटा को घेर सकी या नहीं, कहो!
कुछ मेघ झरे या नहीं?
हवा में दूर-दूर तक फैला क्या संगीत नहीं?

रूपे! मैं विफल रहा शायद
चाँदनी नहीं आई घर में
जादू न उतर पाया स्वर में!
पर कुछ तो सफल हुई वीणा
इस अन्धकार में तुम आई
टकराई तो स्वर-लहरी मन की लहरों से!

रोती क्यों रे?
क्या बहुत चोट लग गई तुम्हें?
अब तो सुनहले दिवस, चाँदी की रात चमकने वाली है
घबराती क्यों हो? गुच्छ-गुच्छ अब जुही गमकनेवाली है!
शृंगार तुम्हारा होगा, तुम तो किस्मत लेकर आई हो
इस वेणुग्राम में घिरकर भी तुम वैशाली में छाई हो!

निष्कपटमयी रूपा प्रसन्नता की डाली को हिला रही
झकझोर रही है साँसों को

लगता कि किसी ने पैरो पर रख दिए फूल
कॉटो को दिया निकाल किसी ने प्राणो से
दिल की धरती पर मधु वसन्त छा गया कही
सपने की झुरमुट मे कोई ग्रा गया कही !

वह बोल उठी ग्रपने सपने के स्रष्टा से
इस प्रथम खुशी के द्रष्टा से—
कब ग्राएगा वह दिन मेरा,
कब रात जिन्दगी लेकर घर मे ग्राएगी ?
कव मॅजरेगी यह ग्रमराई
मेरी कोयल किस रोज कहाॅ पर गाएगी ?
किस दिन गुलाब की शय्या पर मै सोऊॅगी
ग्रपनी साॅसो को कव सुगन्ध से धोऊॅगी !
रूठूँगी कव ? किस दिन इतनी इतराऊॅगी
ग्राइना देखकर किस दिन मै शरमाऊॅगी !
गाऊँगी कब ग्रपनी इच्छा की छाया मे
ग्रगराऊॅगी कब मै ग्रपनी ही माया मे !
हे चन्द्र ! कौन वह दिन होगा
वह रात कहाॅ से ग्राएगी
क्या रूपा ऐसी खुशियो मे
दो क्षण भी मृत्यु न पाएगी ?

ग्रा गई ग्राम्रपाली इतने मे द्वार-निकट
वह लौट रही रूपा की बातो को सुनकर
परछाईं के उस ग्रन्धकार मे उसे न कोई देख सका
वह चली .हाय,
रूपा के सम्मुख जलनेवाली वत्ती भी वुझ गई तुरत
वह बहुत जोर से एक बार हॅस पडी

आम्रपाली के कानो तक ध्वनि जाकर टकराई
वह लौट पडी ।
देखा कि कक्ष मे अन्धकार ही अन्धकार
है हिला रहा कोई उँगली से एक तार ।

वह चली गई कुछ दूर
एक महुआ के नीचे बैठ गई
गूँथने लगी नयनाश्रु-हार
देखने लगी बिजली जो चमक रही नभ मे
औ' सुनने लगी जलद-गर्जन
सोचने लगी—मानव कितना है निठुर
क्रूर उसका दिल इतना होता है ?
मेरे सम्मुख तो कभी दीपिका बुझी नही
बीमार बाप को छोड यहाँ रूपा आई
आश्चर्य ।
और मै दवा पिलाती रही उन्हे ! वह चली गई
मै समझ गई
मुझ से ज्यादा वह प्रेम चन्द्र को करती है !
पर कलाकार क्यो झूठा है ?
क्यों कहता है—मै रूपा को चाहता नही !
इतनी भोली मै नही कि समझूँ बात नही
क्या मेरे दिल पर यह निष्ठुर आघात नही ?
अब राजनर्त्तकी रूपा नही बनेगी क्या ?
पूछूँगी आज इसी वेला
मै जान-बूझकर ढेला कभी न खा सकती
रूपा कह दे तो मै न वहाँ तक जा सकती ।
जा सकती हूँ
पर नही प्रीति के लिए

गीत के लिए सिर्फ?
लेकिन ऐसा क्या सभव है?
सभव दुनिया मे सब कुछ है!
क्या सब कुछ सभव दुनिया मे? · · ·
तब तो मै ठगी गई केवल!
ऐसा न कभी हो सकता है
प्रिय चन्द्रकेतु है कलाकार
वह सच्चा है
मै उसकी आँखो की हसीन अभिलाषा हूँ
वह कहता है मै उसके स्वर की भाषा हूँ!
दीपक यो भी बुझ जाता है
उसमे भी कितनी तेज हवा चलती सन-सन
यदि मै रूपा के सम्मुख ही आ जाती तो फिर क्या होता?
वह क्या कहती मुझसे?—
इतना ही कहती—"तू क्यो आई है?
चाचा को छोड यहाँ आई किसलिए तुरत?
मै तो तुझसे कह कर आई थी · · ·"
नही, मगर वह नही बोल पाई थी कुछ
उसने तो सिर्फ कहा था—आओ! यही रहो · · ·!

अब चन्द्रकेतु के घर मे दीपक जलता है
रूपा कहती है—नही,
नही, मै राजनर्त्तकी नही कभी भी बन सकती
प्रिय हे! वैशाली-भवन न तुमसे बढकर है!
फिर राजनर्त्तकी मै कैसे बन सकती हूँ?
सुन्दरता की अलका ही कोई हो सकती
जो वासन्ती हिलकोरो-सा ही नृत्य करे
जो सौ-सौ राजकुमारो पर जाकर बिखरे

मुझसे सुन्दर तो आम्रा ‥
कितनी बालाएँ होगी भू पर
क्या कला–वाटिका मे कलियों की कमी कही ?
सुनती हूँ चयन–परीक्षा होगी एक रोज
कितनी कुमारियाँ जायँगी वैशाली मे
पर एक चुनी जाएँगी शत–शत आँखो से !

सुनते ही यह, विस्मय से बोला चन्द्रकेतु—
री, देर अधिक हो गई
तुम्हारे चाचा है बीमार पडे !
तुम क्यो आई हो आज
भला चाची से ही सेवा होगी ?
वह बात बहुत कम सुनती है
बीमार रहा करती अक्सर
तुम जाओ, बहुत विलम्ब हुआ
यह मत कहना—मै चन्द्रकेतु के यहाँ गई थी—
वर्ना वह फटकारेगी, चाचा भी चिन्तित होगे ही !
कहना पाली से किस्सा सुनती थी केवल !

पर रूपा ने कह दिया कि आम्रा—
मेरे घर ही बैठी है
चाचा की सेवा करने को ही आई थी !

मुस्करा उठा तब चन्द्रकेतु
मन-ही-मन क्रोध हुआ लेकिन
झाँकती हुई रूपा इस घर से चली गई—
कुछ खुशी और कुछ गम लकर
लगता है जैसे मन की बाते—
कहकर भी वह छली गई !

आभा रूपा को देख रही
वह सिहर रही
वह पिघल रही
वह सहम रही
छिप गई वृक्ष मे एकबार
पर एक ज्वार—
मन की पुकार से उत्तेजित हो गया तनिक
दिल की धडकन बढ गई
प्राण पर एक लहर चढ गई
किन्तु फिर शान्त
उसी एकान्त वृक्ष की छाया मे वह खड़ी रही !
रूपा तेजी से निकल गई
आभा की आँखे पिघल गई
उसने देखा,
है चन्द्रकेतु का द्वार बन्द
भीतर दीपक जल रहा
किन्तु सन्नाटा छाया है घर मे !
अम्बर मे बिजली कौंध रही
झोके से पत्ते काँप रहे
उस पार कही से कोई तान अलाप रहा !
वह लौट गई
माँ सोई थी
पर अन्ध पिता की आँखे
अब तक जगी हुई थी सावन मे !
धीरे-धीरे पाली निज घर मे चली गई
दीपक को सहसा बुझा दिया
जैसे निद्रा को लेकर ही वह आई हो
सपने की दुनिया दोनो दृग मे छाई हो !

तृतीय सर्ग

खिलखिला उठा तब स्वर्णभद्र
प्रिय चन्द्रकेतु की बाते सुन,
कह दिया उसी क्षण—अभी जवानी आई है
बेटा, आँखो मे अभी तुम्हारी, सिर्फ चाँदनी छाई है!
सुन्दरता का साम्राज्य व्याप्त है प्राणों मे
इसलिए कला अँगराती है
कल्पना दर्द की पाँखो पर मुस्काती है
भावना स्वर्ग के दरवाजे तक जाती है!
है अभी आँख मे ओस, जरा किरणो को भी तुम आने दो
आँधीवाली वह हवा उष्ण साँसो से तो टकराने दो!
समझोगे तब जिन्दगी
अभी तो यौवन की हिलकोरे आती-जाती है
दिन-रात नदी मे लहरे ही लहराती है!
यौवन की अल्हड घडियो मे
मै भी कुछ इसी तरह ही था
उर्वशियो की तस्वीर बनाता था केवल,
तूलिका चूमती थी गुलाब के अधरो को
रगो मे ही साहित्य उतारा करता था
दृश्यो मे कविता नग्न नृत्य ही करती थी!
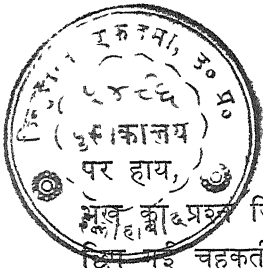
पर हाय,
भूख का प्रश्न जिस समय चीख उठा,
छिप गई चहकती कला-कोकिला जगल मे।
मन पर खिलनेवाली कलियाँ
जल गई परिस्थिति-लपटो से,
तब से मै आग चबाता हूँ
सोने का चित्र बनाता हूँ।

हे चन्द्रकेतु।
धन के आगे तो कलाकार झुक जाता है
चलते-चलते भी वह पथ मे रुक जाता है।
कचन की प्रभुता सभी कला पर छा जाती
लाचार तूलिका एक समय अकुला जाती।

तुम चलो, रहो वैशाली मे
गाँवो मे कला नही जिन्दगी बिता सकती
मानवता की वदी विहगी नगरो मे ही कुछ गा सकती।
बारह वर्षो मे मेरा जीवन बदल गया, तुम जान रहे
तुम बिके हुए इस कलाकार को तनिक नही पहचान रहे ?

देखो मेरा यह भवन,
बाग देखो सुन्दर
सोने-चाँदी के बर्त्तन तुमने देखे है ?
देखी है मेरी अमराई ?
बारीक नजर से रूपा के
वस्त्रो को कभी निहारा है ?
उसके हीरे का हार देख कर
मन को कभी पुकारा है ?
क्या किसी राज-कन्या से वह कम लगती है ?
दर्पण के सम्मुख रोज सुबह मे जगती है।

है कुछ रहस्य जो रूपा यहाँ विचरती है
कुछ कहो, जिन्दगी कैसे इधर गुजरती है !
सन्तान-हीन मैं, रूपा मेरी प्यारी है
देखी है उसकी आँखे ? कितनी न्यारी है !
तो सोचो तुम दो-तीन रोज
वैशाली चल सकते कि नही,
रह सकते मेरे साथ वहाँ ?
विख्यात बाप के बेटे हो
वे वृज्जि-सघ के थे सदस्य
यदि मृत्यु नही होती उनकी
तो क्या से क्या वे हो जाते
वे परामर्श-मडल के नामी वक्ता थे !
आश्चर्य कि तुम एकाकी घर मे रहते हो
क्या करते हो !
केवल वीणा मे मस्त ?
सुघड चित्रो मे केवल मुग्ध ?
और कुछ नही ? अरे,
कचन की माया कब समझोगे जीवन मे ?
दासी से भोजन बनवाकर ही खाओगे ?
सुनता हूँ, रूपा और आम्रपाली भी भात बना देती
रोटियाँ सेककर तुम्हे खिला भी देती है !
अच्छी है, दोनो अच्छी है,
साक्षात कला की देवी ह !
रूपा की माँ कहती थी
क्यो तुम यहाँ नही खा जाते हो—
अपने घर से तुम क्यो न यहाँ आ जाते हो ?
रोहिणी जिस तरह रूपा की
उस तरह तुम्हारी चाची है,

जानते नही ?—
थे पिता तुम्हारे वन्धु-सदृश
करुणा के थे देवता ! हाय, वे चले गए !
ऐसा मत समझो बेटा,—
कोई नही तुम्हारा धरती पर,
मै हूँ जीवित
रोहिणी अभी जिन्दा है
रूपा जीवित है !
मेरा मकान
उद्यान
सभी सामान
न केवल मेरे है !
तुम कलाकार हो,
रत्नहार हो चन्द्रकेतु,
इस घर को अपना ही घर समझो जीवन मे !

दोपहरी का है समय
गगन है जलद-हीन
भीषण गर्मी मे प्यास लगा ही करती है
चन्दन का शर्बत लिए रोहिणी आई अपने आँगन से !

रूपा आश्रा के सग
नदी के पार गई है नौका से
उस पार सामने हिरणे बिकने आई है,
कहता था नाविक—मेला-सा है लगा हुआ,
आश्रा के कहने पर ही रूपा चली गई !

दो-तीन घूँट पीकर
मुस्काकर कहा चन्द्र ने चाचा से—

तुम कितने अच्छे हो चाचा !
मेरे ऊपर तुम कितनी करुणा करते हो !

पी लेने पर वह फिर बोला—
लेकिन चाचा,
सोने मे ताकत नही कि मुझे खरीद सके
आजादी लेकर मै धरती पर आया हूँ
मेरी वीणा जीना पसन्द करती है अपनी धारा पर
मेरी तूली अपना ही चित्र बनाएगी
औ' मेरे मन का कलाकार ?
चुपचाप मृत्यु से हाथ मिला कर बैठा है !
यह स्वाभिमान के लिए
जिन्दगी लेकर आया है जग मे
अपनी मर्जी से वैशाली से आया है इस मिट्टी पर,
अमराई मे उर्वशी नाचने आती है
मेरी बुलबुल तो कॉटो मे भी गाती है !
दो आशीर्वाद मुझे चाचा,
मै यही रहूँ
चहकूँ मै यही कही रहकर
पर अपने मन की बात कहूँ !
तन बिक जाएगा कचन से
तो मन भी मुरझा जाएगा
जब अपनी धूप नही होगी
तब बादल कैसे छाएगा ?
चाचा मै हूँ निर्भीक,
न डर है कुछ भी मुझे सितारो का
मै नही छोड सकता आँचल
अपनी अलमस्त बहारो का !

चाचा, क्या तुमने सुना नही,
राजगृह से आया था मोहक पत्र मुझे,
लेकिन तूली बिक सकी नही।
यह चन्द्रकेतु बिकनेवाला है नही कभी भी सोने से
इस चन्द्रकेतु की कला नही घबराती है अब रोने से।

मिहनत से ही प्राणो मे जीवन की खेती करता हूँ
सूखी रोटी खाता हूँ पर नही किसी से डरता हूँ।
सोने के पिजडे मे मेरा पछी कैद रहेगा क्या
कचन की आदेश-चोट यह यौवन भला सहेगा क्या?
अगर कला मे स्वाभिमान है, तो धरती पर जी लेगी
वदी होने के पहले ही जहर घोल कर पी लेगी।
किन्तु झुकेगी नही कभी, तूफानो से टकराएगी
स्वतत्रता की विहगी अम्बर मे भी जाकर गाएगी।
कलाकार का राज्य स्वर्ण-गिरि-शिखरो से कुछ ऊपर है
चाचा, सुन लो, शुद्ध कला तो मानवता के भू पर है।
मै न गॉव को छोड सकूँगा, हरित गॉव मे जीवन है
जीवन है जिस जगह, वही पर स्वाभिमान का यौवन है!
सॉसो मे जिन्दगी अगर आ जाए तो वह जीना है
जहर नही जो पीता उसका पीना भी क्या पीना है?
चाचा, मै हूँ नौजवान, उन्मुक्त बीन पर गाने दो
गीतो की स्वच्छन्द लहर पर प्राणो को लहराने दो।
मै हूँ वह आकाश, जहॉ मन के बादल ही आते है
मै हूँ वह धरती, जिस पर सपने ही सपने छाते है।
वही स्वप्न देखा करता है जिसकी नीद सुरीली है
भावुक ऑखो मे कुछ कलियॉ नीली, उजली, पीली है!
मुझे न कैद करो चाचा, चचल लहरो को आने दो
कलाकार को अपनी ही आजाद राह पर जाने दो!

तब होगी जय वृज्जिसघ की—गर्वोन्नत वैशाली की
ज्योति तभी विकसित होगी इस नए सूर्य की लाली की !
माँफ करो, नगरो मे रह कर कला बहुत अकुलाती है
सच कहता हूँ, मुक्त गगन मे ही चिडियाँ कुछ गाती है !
कृषक नही है कलाकार क्या ? वे भी चित्र बनाते है
झूम-झूम कर बादल के नीचे वे भी तो गाते है !
खेतो की हरियाली पर जीवित कविताएँ सोती है
फूलो के सम्मुख कलियाँ भी दुलहन बन कर रोती है !
चमक-चमक उठती जब बिजली, हरियाली अँगरा जाती
लू लगती जब फुलवारी मे, तभी घटा भी छा जाती !
वैशाली के रक्षक तो इन गाँवो के वनमाली है
खेतो को जीवित रखनेवाली तो घटा निराली है !
गाँवो को भी कला चाहिए, गीत चाहिए जीवन को
राग-रागिनी सभी चाहिए हरियाली के यौवन को !
चाचा याद करो कण्वाश्रम, जहाँ 'कुन्तला रहती थी
घोर, घोर जगल मे भी वह स्वर की बाते कहती थी !
हिरणी व्याघ्र-निकट आकर भी सुनती थी स्वर-लहरी को
ऐसी समाँ नसीब नही थी कभी किसी भी नगरी को !
पर जिस दिन वह चली गई तो मुनि की आँखे पिघल गई
आँसू झरते रहे हाय, वह दूर बहुत ही निकल गई !

चाचा, नगर बडा निष्ठुर है, मुझे गाँव मे रहने दो
फूल बरसते यही, मुझे कोमल चोटे ही सहने दो !
नगरों के गुलाब से निर्मल यहाँ गाँव की बेली है
खिले पालतू फूलो से तो अच्छी जुही, चमेली है !
मुझे मधुर अगूर चाहिए, नही चाहिए अगूरी
हृदय प्राण के निकट चाहिए, नही चाहता मै दूरी !

स्वच्छ साँस मे ही गीतो की बदली आया करती है
पावन नयनो मे ही वह अकुला कर छाया करती है !
एक बूँद आँसू, सौ मुस्कानो को लज्जित करता है
कलाकार है वही, जिन्दगी लेकर ही जो मरता है !
हाय, बहुत कम लोग समझते है प्राणो की भाषा को
जला दिया करते है शबनमवाली मृदु अभिलाषा को !
फूल तोडना सरल, किन्तु अवलोकन मे कठिनाई है
सुन्दरता मे हर्ष और करुणा दोनो ही छाई है !
आँखे सबको मिली किन्तु रोशनी कहाँ मिल पाती है
बहुत वेदना होती है तब प्राण-घटाएँ छाती है !
कीमत कुछ भी नही कष्ट से रोनेवाली आँखो की
सुन्दरता है अधिक पतगो की उन जलती पाँखो की !
बादलवाला चाँद किसी भी आँखो मे आ सकता है
जिसे वेदना प्यारी है, आदमी वही गा सकता है !
करुणा ही तलवारो को भी विजय-हार पहनाती है
आँसू की चिनगारी ही सेना मे आग लगाती है !
एक दर्द है दिल मे जो मनुष्यत्व छिपाए बैठा है
प्राण-प्राण मे एक प्यार ही दीप जलाए बैठा है !
इसीलिए तो राजतत्र है नही मुक्त वैशाली मे
सबका सम-अधिकार प्राप्त है विश्व-चेतना-लाली मे !
समता का आदर्श व्याप्त हो, यही बुद्ध की वाणी है
मानवता हो मुक्त, यही गौतम की अमर कहानी है !
सागर से भी अधिक तथागत की आँखो मे पानी है
राजा है आनन्द और करुणा ही उसकी रानी है !
यही कला का चरम लक्ष्य है, यही दिव्य परिभाषा है
हर्ष प्राण-सगीत, वेदना जिसके स्वर की भाषा है !
चाचा, क्या-क्या मै बोल गया
तुम क्षमा करो,

अल्हड यौवन की वाणी रुकती नही कभी
कहनेवाली साँसे भी झुकती नही कभी।
चन्दन के शर्बत पीने से मै झूम गया
ख्यालो मे ही मै इधर-उधर कुछ घूम गया।
लगता है जैसे तीर चलाने लगा स्वय
अकुलाहट के आगे अकुलाने लगा स्वय।
क्या करूँ, व्यास-साहित्य पढा करता हूँ मै
कुछ इधर-उधर की बात गढा करता हूँ मै।
रूपा तो सारी गीता को रट गई शीघ्र
सीता बन कर वह आई है
आम्रा केवल वृन्दावन का वर्णन पढती
दोनो मे बहुत बडा अन्तर मै पाता हूँ
लेकिन दोनो आ जाती, जब मै गाता हूँ।
चाचा, तुम अगर नही होते
तो नही नाचती ये परियाँ।
औ' एक बात सुन लो चाची रोहिणी आज
रूपा को ज्यादा खीर खिलाओ कभी नही
नर्त्तकी बहुत हल्का भोजन ही करती है!
रूपा, आम्रा तो सचमुच सगी बहन-सी है
माँ ही कहकर सम्बोधन करती है तुमको
वैशाली की लडकियाँ, कला मे सभी देश से उन्नत है
इस वेणुग्राम की माताएँ बच्चो को जीवन देती है!
चाचा, आम्रा के अन्ध पिता
उपनिषदो के भी पडित है,
कहते है—बुद्ध उसी मिट्टी से आए है।
चाची रोहिणी पुराण पढा करती निशि मे
शिव के मन्दिर मे फूल चढाने जाती है
वन्दना भैरवी मे ही अक्सर गाती है।
बोलो चाची, सच है कि नही?

दोपहरी की बाते,
सध्या की किरण देखने लगी स्वयं
सामने एक वातायन से
सूरज की लाली आती है
कुछ दूर वेणु-वन मे,
चिडियाँ चहचहा रही
लगता है जैसे रूपा आम्रा के सम्मुख
अपनी पायल को आज बहुत झनझना रही !

उठ कर पलग से स्वर्णभद्र ने कहा चन्द्र की पीठ ठोक—
बेटा ! तुम सच्चे कलाकार हो जीवन के
तुम अर्थ समझते हो मनुष्य के यौवन के !
मेरे सफेद ये केश तुम्हे आशीष दे रहे है मन से
फिर भी मेरी बातो को
अलग न करना अपने चिन्तन से !
जीवन को सुखी बनाना है
चोटी पर चढके गाना है
खुद खाना और खिलाना है !
कचन की कीमत आगे समझोगे तुम भी,
इच्छा की पाँखे अम्बर को छू देती है
क्यो जाता है आदमी हिमालय पर चढने ?
कामना वहाँ तक ले जाती है पैरो को !
कचन के रथ को
मन की उत्सुकता ही हाँका करती है,
सोने का सचय पाप नही
कर्त्तव्य परम,
जीने के लिए कनक की पूजा होती है !
तूलिका और हल मे श्रम की ही महिमा है

रगो में रोटी है, इसको तुम याद रखो,
रागो मे रोटी है, इसको भूलना नही,
आजाद जिन्दगी खाकर ही तो जीती है
हाँ, साँस फूल की खुशबू भी कुछ पीती है !

इतने मे रूपा हिरन लिए आई आम्रा के सग-सग
ज्यो दो दीपक के निकट
एक छोटी तितली आ जाती है
या नीरव सध्या के दोनो कर मे जल उठते है प्रदीप
छोटे-छोटे दो तारो के !

रूपा प्रसन्न हो गई
देख कर अपने इस घर का चिराग
आम्रा आँखो से दो आँखे देखती रही
लगता है जैसे स्वर्णभद्र है देख रहा सब चित्रो को
अव्यक्त भावनाएँ भी हो रही व्यक्त
जब रूपा ने कह दिया—चन्द्र !
कैसी है यह नूतन हिरनी ?
उस पार गई थी लाने को. ... !

इस समय आम्रपाली बोली—
मेरे कहने पर ही तो हिरनी आई है
चाचा, देखो, आँखे तो लम्बी लगती है
उजले-पीले ये दाग बहुत ही अच्छे है !
री रूपे ! इसे बाँध दे अब
वर्ना यह तुरत हवा-सी उड कर भागेगी. . !

अब चन्द्रकेतु चल पडा वहाँ से, कर प्रणाम
हे राम !—स्तब्ध अकुलाहट की आवाज हुई
जिसको न किसी ने सुना प्राण के सिवा अभी
पर स्वर्णभद्र तो मुख को पढनेवाला है,
आकृति पर एक उदासी आई, चली गई !
भौहो पर एक खुशी की रेखा भी कुछ रुक कर बिखर गई
नयनो से कुछ भी व्यक्त नही हो सका किन्तु !
हिरनी जो थी !

पर हिरनी की आँखो मे क्या परछाई नही पडी उसकी ?
रूपा निराश क्यो हुई चन्द्र के जाते ही ?
आभ्रा न साथ क्यो गई उधर ?
वह क्यो चाचा को देख रही ?
फिर चाचा क्यो चुप है हिरनी को देख-देख,
उँगलियाँ फडकती क्यो लोचन के आसपास ?
क्या निशि मे चित्र नही बनता ?
तूलिका बहुत है सधी हुई !

सूरज तो डूब गया लेकिन
उसकी लाली तो छाई है !
अँधियाली होगी रात
चाँद के बदले तारे आएँगे
बदली भी कुछ अकुलाती है—
उस दूर क्षितिज पर सध्या को शरमाती है !

उग आए तारे तीन,
भला रूपा क्यो छूती बीन ?
आभ्र किस ओर गई ?

क्या अभी इसी क्षण गागर भरने जाएगी
या वह भी वीणा से यो लडने जाएगी ?
अन्धा बेचारा बाप
न कुछ भी देख सका !
क्या उसे पता है, पाली भी कुछ सोच रही ?
पत्नी माया ने उसे कहा होगा कुछ तो !
तब तो वह चन्द्रकेतु से बाते करता है
कुछ व्यथा हृदय की हरता है !
बेचारा योद्धा था लेकिन हो गया अन्ध !
आँखे रहती तो बेटी का देखता रूप
चन्द्रमा एक साक्षात देखने मे आता !

अमराई मे पाई बेटी इतनी अच्छी हो सकती है ?
क्या इसीलिए वह हुआ अन्ध,
जो नही देख पाए कन्या की अलका को ?
इतनी अच्छी आँखे भी देखी जाती है ?
इतनी टेढी भौहो पर नजर नही टिकती !
उज्ज्वल कपोल पर क्या गुलाब का रग खिला !
ऊँची गर्दन
क्या होठ लाल है हुरहुल-से
ग्रीवा के नीचे एक जिन्दगी छाई है !
वह लहर बहुत लहराई है
सर्वत्र एक-सी सुन्दरता छितराई है !
चरणो मे भी बिजली हँसती
ऐसी हिरनी भी कोई बाँध सकेगा क्या ?
आदमी अमृत पीकर भी नही पचा सकता
इसलिए देवता बनकर ही वह पीता है,
तव जीता है !

री कहाँ चली ?—माया ने पूछा बेटी से,
आती हूँ !—उत्तर दिया आम्रपाली ने भी !
क्या सध्या मे ही चन्द्रकेतु की बीन बजी ?
गीतो मे ही जिन्दगी छुपाए है क्यो वह ?
क्या आज हवा तो तेज नही ?
छोटी बत्ती है, झोके से बुझ जाती है !
री आम्रे, तू बच गई,
साँप को लाँघ दिया तूने तम मे ?
कुछ राह देखती चल !—बोली ग्रामीन सखी,
पर आम्रा क्या सुन सकी नही ?
सुनती तो निश्चय रुक जाती,
कुछ पछताती !
वह कौन ? सर्प से डरे न जो !

क्यो खडी हो गई आज उसी दरवाजे पर ?
आ, आ भीतर,
बत्ती मे थोडा तेल और धर दे आम्रे !
लगता है जैसे आज रात भर गाऊँगा
गीतो से भोर करूँगा मै
तू अधिक देर तक मत रहना,
क्या सोच रही ?
आ, आ भीतर
रख दे थोडा-सा तेल, नही तो बत्ती भी बुझ जाएगी
मै तारों को झनझना रहा—झनझना रहा !
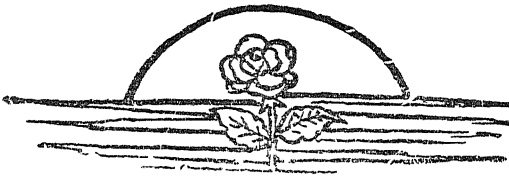
चतुर्थ सर्ग

प्राणो मे कैसी आग लगी
कैसा भीषण विस्फोट हुआ
यह कैसा ज्वालामुख फूटा
करुणा का हाहाकार हुआ
कैसा यह तीर लगा मन पर
आई कैसी आँधी उर मे?
कैसा तूफान उठा कि जिन्दगी हिलने लगी हिलोरों से
आकुल-व्याकुल हो रही साँस की हवा स्वय झकझोरो से!

अन्धी आँखो मे भी प्रवाह है आँसू का
क्यो माया सिसक रही अपने पति के समीप
क्या आम्रपालिका चली गई वैशाली मे?
रूपा के सँग क्यो गई वहाँ?
रूपा जाती थी नही वहाँ, इसलिए गई?
वह स्वर्णभद्र के आग्रह को थी टाल रही,
फिर चली गई क्यो साथ-साथ?
क्या चन्द्रकेतु से बिना कहे ही चली गई,
दर्शक बन कर भी राजभवन में छली गई?
उस छुपी चाँदनी को किसने पहचान लिया,
वैशाली ने कैसे पाली को जान लिया?

क्या उसकी पायल भी पुकारने लगी स्वय,
निज सुन्दरता को वह सॅवारने लगी स्वय ?

क्या कहा ?
पचासी बालाएँ सम्मिलित हुई !
रूपा न किसी की ऑखो मे जॅच सकी वहॉ ?
क्या स्वर्णभद्र के स्वर मे कोई शक्ति नही ?
वैशाली का है कलाकार
उसके घर पर सामन्त स्वय ही आते है !
वह तो अमात्य को भी आमत्रण देता है
फिर राजनर्त्तकी आम्रपालिका
कैसे चुनी गई, बोलो ?
क्या स्वर्णभद्र ने उसका परिचय दिया वहॉ ?
वह तो उदार शिल्पी है
करुणा रखता है
पुत्री की तरह मानता है निज पाली को
शिक्षा भी उसने ही दी है
उसकी ही आज्ञा से दोनो
बहने आई वैशाली मे !
अति आर्कषित वस्त्रो मे हुई अलकृत भी
हीरे-मोती के हार वक्ष पर भी लटके
कानो मे कुण्डल लगे
रेशमी घुँघराले केशो मे चम्पक-गध लगी !
सपने की उडती परियो-सी
वे सजी-धजी निकली रथ पर
जैसे लक्ष्मी औ' सरस्वती की शोभा-यात्रा होती हो !
वैशाली के उत्तेजित युवको की ऑखे दौडने लगी
कुछ ने रूपा के चाचा का——

अभिनन्दन किया गरज से ही !
लोचन की लू से आम्रा की कोमल आँखे डर गई तनिक
फिर आम्रा चुनी गई कैसे ?

क्या कहा ?
स्वय वह चली गई वैशाली-कला-मच पर भी ?
रूपा ने कहा कि आज गाँव झुक गया आम्र !
है चन्द्र-शपथ जाओ—
दिखलाओ रूप-कला-वाणी सब कुछ !
तुम महासुन्दरी हो आम्रे,
नर्त्तकी—राजनर्त्तकी तुम्ही बन सकती हो !
लाओ, चरणो मे आज बाँध दूँ मै नूपुर
तुम विद्युत लेकर बढो
ग्राम की मर्यादा रख लो आम्रे,—मेरी प्यारी दीदी छोटी,
है वक्त नही जो लूँ चाचा से राय अभी
बस, शेष बालिका ही करती है नृत्य
यवनिका को अमात्य है देख रहे,
जाओ, मेरी प्रार्थना सुनो,
अब समय नही, अब समय नही, अब समय नही !
अपमान मत करो नूपुर का
देखो, देखो, प्रिय चन्द्रकेतु भी आया है
वह वहाँ खडा है,
क्यो ? समझी ?
उसकी भी एक प्रतिष्ठा है
उत्सुकता से वह देख रहा है केवल, केवल तुमको ही
उसकी आँखो की इज्जत रख लो हे आम्रे,
क्षण मे ही मुख्य यवनिका अब गिर जाएगी
घोषणा तुरत हो जाएगी !

जाओ, जाओ आत्रे मेरी,
तुम उधर पार्श्व मे खडी रहो
लाओ अधरो को जरा चूम लूँ अधरो से
अपनी मगल कामना तुम्हे देदूँ देवी,
कचुकी बाँध दूँ कसकर मैं,
कटिका तो बिल्कुल ठीक बँधी
तुम मेरा हीरक-हार पहन लो, वह दे दो
मेरी कचुकी बहुत अच्छी
आओ, छाया है, इसे पिन्हा दूँ, उसे मुझे दे दो आत्रे···!
जाओ, अब जाओ
इन्द्र-सभा-उर्वशी जरा मुस्का दो तुम,
कर रहा प्रतीक्षा चन्द्रकेतु
लगता है जैसे उसने भी पी ली मदिरा
वह झूम रहा है मस्ती मे
मधु-पर्व आज उसकी आँखो मे बोल रहा
वह तेज नशा से डोल रहा!
जाओ, जाओ अब नृत्य शेष होने पर है
तुम कितनी अच्छी हो आ·· त्रे···!
तुम चली गई!
क्या बिजली है
कितनी सुन्दरता है तन पर
क्या खूब,
बहुत अच्छी आत्रे,
नाचो, नाचो, ऊंघती दृगी भी जाग उठी
निर्झरी, परी, लहरी की तरी, स्वय फुलझरी
कला बिखरी मेरी सहचरी
हरी हो गई कामना की विटपी!
मतवाली भर दी तुमने फूलो से डाली

देवता ढँक गये आज वसन्ती फूलो से
मदिर मे घटी बजी
शख बजे उठे आज
आरती उतारूँ मै। . . .
नाचो, नाचो आम्रे,
वह तीर हजारो प्राणो को है छेद रहा
मै देख रही, मै देख रही, मै देख रही—
सबके दिल को बिजली ने छू कर देख लिया।
सामन्त, सदस्य, सैन्यपति भी
कोमल कुमार सब माता हो गए—
सुन्दरता की एक चाल से री आम्रे,
जादू है चरणो मे,
मुख से साक्षात काम-सम्राज्ञी झाँक रही कब से ,
ओ री शकुन्तले—उर्मि-कुन्तले, सरस धवल चचले,
निर्मले ! आओ बाँहो मे कस लूँ
छाती से जरा लगा लूँ विजयी वक्ष
आज मै चरण चूम लूँगी सचमुच
नूपुर पर सौ-सौ फूल चढा दूँगी। आओ,
नारी होकर भी नारी के
कोमल कपोल पर अपना होठ लगा दूँगी।
किसको न विजय पर गर्व ?
सर्व पूजा की कलियाँ खिली जा रही है मेरी
अन्धेरी निशा नही है, सम्मुख चाँद खडा
आकाश शुभ्र। कोई भी तारा नही आज दीखता कही !

तुम वही रहो हे चाँद !
चरण को अभी चूमकर आती हूँ
क्या एक हार भी नही पिन्हा दूँ आम्रा को ?

इतनी निष्ठुर मै नही
बहन से बहन दगा क्या करती है ?
तुम आकुल-व्याकुल क्यो होते ?
लगता है जैसे तुम रोते !
फिर पिता जरा मुस्काते है
मन-ही-मन वे क्या गाते है—
मेरी इस स्वर्ण सफलता पर
वे इतना क्यो इतराते है ?
मेरे कहने पर आम्रा नाच रही रुनझुन
मैने रख दी मर्यादा अपनी मिट्टी की !
फिर भला पिता क्यो झूम रहे ?,—
आम्रा के स्वर को चूम रहे !

क्या कल से आम्रा राजभवन मे जाएगी,
चॉदनी रूप की वैशाली मे छाएगी ?
मै एकाकी ही वहॉ रहूँगी जीवन मे ?
क्या वह न साथ देगी मेरे मृदु यौवन मे ?
आम्रा के बिना भला रूपा रह पाएगी ?
अकुलाएगी !
कैसे जाएगी नदी-तीर गागर लेकर
लौटेगी कैसे बातो का सागर लेकर !
मेरी ऑखो मे अश्रु ?
अरी भोली, इस क्षण क्या रोती है
चॉदनी रात मे सोती है ?
क्या तुम्हे कहेगा चॉद ?
खुशी मे ही क्यो गम को ढोती है ?
बालम का बिस्तर सभी स्वर्ग से सुन्दर है
चुम्बन की घडियॉ सपने से भी मनहर है !

क्या भूल गई तू बाँहो मे यो कस जाना
कर तनिक याद नगे शरीर का अँगराना !
मिथ्या है कितना विश्व, न हो जब प्राण-पिया
कर रहा प्रतीक्षा कब से भखा हरित हिया !
अब तक चुम्बन का स्वाद कभी भी मिला नही
है मुझे याद, वह चाँद आज तक खिला नही !
फूलो के बिस्तर की निद्रा मतवाली है
तारो मे आनेवाली उषा निराली है !
कितनी प्यासी है ! भूल गई ?
आम्रा के लिए भला रोती है जीवन मे ?
सबसे अच्छी मुस्कान बुला ले अधरो पर,
तू जीत गई, वह हार गई !
री, प्यार सुरक्षित है तेरा
भर ले बहार को गोदी मे
छू दे साँसो से स्वर्ग-द्वार
तू कितनी बुद्धिमयी रूपे ···!

पर मैने ऐसा समझ, न कुछ भी किया आज
मै हार गई मन मे तब आम्रा को भेजा !
वह नाच रही,
अनुपम है उसका नृत्य,
हिलोरे लेती है
दो नयनो से ही सबको कुछ-कुछ देती है !
कितनी अच्छी अभिव्यक्ति उँगलियो की होती
है लोच भरी बाँहे कितनी !
कटि लचक रही वल्लरियो-सी
आँखे खजन हो गई
पैर मे पख लग गए जादू के !

नूपुर की मृदु झकार उड रही दूर-दूर
दोनो वक्षो पर हार चमकता है कितना
कुण्डल मे किरण जडी है क्या ?
आम्रे, तुम सर्वोत्तम शोभा वैशाली की
अनुपम दीपिका दिवाली की !
वादक वीणा पर झूम रहा
क्या ताल ! ताल पर ताल, छन्द पर छन्द
बज रहे है मृदग द्रिम-द्रिम,
टिन-टिन-टुन जल-तरग
मृदु प्राण-तान बाँसुरियो की,,
झझा-रव झाँझो के प्रमन्द !

क्या चन्द्रकेतु भी यहाँ बजाने आ जाता
आम्रा की घुँघरू पर स्वर से वह छा जाता ?
वह क्यो आता ?
है स्वाभिमान
जीवन का सच्चा कलाकार !
पर आया क्यों वह यहाँ आज ?
पहले कैसे चल पडा स्वय ?
चाचा ने उसको कहा नही था चलने को,
रथ पर आता तो कितना अच्छा लगता वह !
पैदल ही आया होगा वह,
मैंने था कहा उसे कि चलूँगी वैशाली
तब तो वह चुप था, कुछ भी कहा नही—
कैसे आया,
क्या आम्रा ने······?
पर उसे ज्ञात था नही
आम्र तो शेष घडी मे चली सग !

क्या उसे पता था, आम्रा भी जाएगी मेरे साथ-साथ ?
मेरे कारण ही वह आया
वह मुझे प्यार तो करता है,
मन हरता है !
चाचा से क्या वह डरता है ?
माँ ने तो उसे कहा था घर मे आने को,
खाने को भी
फिर चाचा ने भी उसे कहा ही होगा कुछ !
बुद्धू चाचा कुछ नही समझते बातो को
वह नही देखते कभी प्यार की रातो को !
मै हुई सयानी, मुझे नही वे जान रहे
अपनी बेटी को भी न हाय, पहचान रहे ?
चाचा, अब तो समझोगे मेरी बात,
हृदय की रात
वृद्ध होकर आघात किया करते हो क्यो
इतनी मदिरा तुम भला पिया करते हो क्यो ?
हो कलाकार,
तूलिका तुम्हारी खोज नही करती कुछ भी ?
क्या ज्ञान तुम्हारा सोया ही रह जाता है
क्या मुझे देखकर हृदय नही अकुलाता है ?
मै चयन-परीक्षा यहाँ देखने आई थी
पर तुमने नचा दिया मुझको !
मै इतनी रूपवती क्या हूँ–
जो मुझे यहाँ ले आए तुम ?
कितनी परियाँ आई है इस वैशाली मे
उसमे भी मेरी आम्रा भी क्या खूब !
नाक काटी सबकी !
कहती थी मै,

बेटी है यह अज्ञात मेनका की कोई
अन्धे के घर मे कब तक यह रह सकती थी,
निर्झरी भला क्या पर्वत पर बह सकती थी ?
अपनी तरग से यह वैशाली मे आई
जन-मन-वितान-नभ मे स्वरूप-ज्योत्स्ना छाई !

नाचो, मेरी आम्रे, नाचो,
अब किना नाचोगी आम्रे !
बस करो, यवनिका गिरती है
उठ रहे लोग
ताली बजने ही वाली है
जयकार अधर पर रुका हुआ,
इस कला-विजय का घोष जरा सुन लूँ मै भी !
मै चरण चूमने को कब से अकुलाती हूँ
दीदी होकर भी नही तनिक सकुचाती हूँ !
लज्जा की है क्या बात ?
कला पर सभी फूल बिखराते है,
है उम्र भला क्या चीज ?
सफलता को सब गले लगाते है !
आओ आम्रे, उन चरणो पर झुक जाऊँ मै
खुशियो की कली चढाऊँ मै !

घोषणा हुई,
आम्रा दीदी से मिली
खिली वह एक बार
दर्शक से वह घिर गई
प्यार से, हारो से ढँक गई
न पूछो प्राण, प्राण की भाषा को
रहने दो मन मे ही असीम अभिलाषा को !

वैशाली की नर्त्तकी चूमती नई नर्त्तकी आम्रा को—
रूपा की विजयी आशा को !
दे रहे बधाई महामात्य
फेकते फूल शत-शत कुमार
किसके न प्राण मे छुपा हुआ उपहार एक
झकार एक, ससार एक, वह प्यार एक !

वह स्वर्णभद्र क्या सोच रहा ?
हँसता तो है !
प्राणो मे केवल आग एक जल रही हाय,
पर उसकी भी तो स्वर्ण सफलता हुई आज
उसके रथ पर ही आम्रपालिका आई थी
उसकी ही कला हुई है विजयी जीवन मे,
रोने की है क्या बात ?
अरे, वह झूम रहा
इसलिए कि रूपा भी तो खुशियाँ मना रही
अपने मन को झनझना रही !

पर कौन मौन रो रहा अभी ?
इस कला-भवन से कहाँ निकलकर चला गया ?
उसने भी एक कली फेकी थी आम्रा पर
देखा न किसी ने क्या उसका उपहार प्रथम ?
क्या रूपा ने भी नही ?
हाय, वह आम्रपालिका नही देख पाई कुछ भी !
खुशियो के वन मे चन्द्रकेतु खो गया कहाँ ?
इतनी निष्ठुर दुनिया है मन की मिट्टी की ?
जीवन को भूल गई क्षण मे
रख दिया किसी ने नीर आग के यौवन मे !

तब स्वर्णभद्र कहता क्यो है ?—
रो मत आम्रे, आँसू को नही निकाल,
आज मै गौरवशाली चाचा हूँ !
मै चन्द्र-सूर्य पर चढा हुआ हूँ कलाकार
आ, आ बेटी, ले ले मेरा अन्तिम दुलार

सच है, पारस से लोहा भी सोना बनता
सौभाग्य इसी को कहते है
नाचने नही आती तो आम्रा कभी नर्त्तकी बन सकती ?
पर सुन्दरता ?
यह तो ईश्वर से मिलती है !
यह नही बनाने से बनती,
आम्रा को ही तो राजनर्त्तकी होना था !
मै पहले अगर समझता तो
रूपा की शादी कर देता
दो वर्ष व्यर्थ के इन्तजार मे बीत गए !
री रूपे ! तेरा चाचा हार गया आखिर
बूढा जो हूँ !
मै कला देखता रहा,
रूप देखा न कभी
पर कैसे कह दूँ—
रूपा आम्रा से भी बढिया नाच सकी,
वैशाली के निर्णय पर है विश्वास मुझे !
देखा था चन्द्रकेतु को भी,
वह कहाँ गया ?
रथ पर बैठाकर उसे गाँव ले जाऊँगा !
पर जिद्दी है,
सामन्तो के रथ पर न कभी वह बैठेगा !

मूरख है वह,
अन्दाज नही है दुनिया का !
आदर्श गगन मे रहता है
इस मिट्टी पर चलना कोई आसान नही !

चाचा ने देखा आम्रपालिका फिर रोती
इतनी भी कोई याद किसीकी करता है ?
वह गाँव,
आम के पेड
नदी का तीर
खेत के बैल
गाय भूरी-भूरी
चितकबरी बाछी,
बाछा भी !
ढेकुलवाला कूआँ
कटहल, जामुन, इमली, महुआ के नीचे दोपहरी
क्या छूट गया सब कुछ मेरा ?
वह अन्ध पिता,
माया माता
सावन, भादो, आसिन, कातिक,
फागुन, असाढ
रहरी-सरसो के फूल
धान की हरियाली
बादल, बिजली,
वे धूल-फूल
हे राम ! कहाँ आई बहती ?
वह गीत, प्रीत
मुस्कान और मादक चुम्बन !

हे चन्द्रकेतु ! मै नही रहूँगी यहाँ कभी
आम्रा, अमराई की ही अपनी बेटी है !
माया माँ, मै तो वही रहूँगी, आती हूँ
मै यहाँ बहुत घबराती हूँ !
मै अन्ध बाप को छोड यहाँ क्यो आई हूँ ?
मै खिली हुई हूँ नही, बहुत मुरझाई हूँ !
हे पिता ! आम्रपाली न कभी धोखा देगी
वह तुम्हे छोडकर यहाँ नही रह सकती है
इस धारा पर वह कभी नही बह सकती है !
आऊँगी, माँ, मै आऊँगी,
प्रिय चन्द्रकेतु से निश्चय गले लगाऊँगी !
क्यो यहाँ चली आई कैसे ?
बेचारी रूपा का हठ तो टालती नही,
फिर चाचा का अनुरोध
कला के गुरु की आज्ञा का पालन
आम्रा तो करती आई है· · · ·!

नर्त्तकी-भवन मे दस हजार दीपक जलते है मन्द-मन्द
फूलो के वन्दनवार द्वार पर शोभित है
सर्वत्र सुगन्धो की माया है फैल रही
सुन्दर विशाल कक्षो मे
आकर्षण फैला है सभी ओर,
चित्रो से सज्जित दीवारे
हर जगह कला ही कला
नग्न मूर्त्तियाँ
मखमली फर्श
कीमती कालीनो मे फूल-पत्तियाँ लिपटी है कारीगर की !
है स्वर्ग भरी यह रात

किन्तु क्या बात कि मुख पर हँसी नही !
ऐसी भी जगह छोडकर कोई जाता है ?
आदमी स्वर्ग के लिए बहुत अकुलाता है !
ये तरह-तरह की सुरा,
पात्र ये चाँदी-सोने के कैसे,
अगूर-गुच्छ
सोने के बने पलग
रग ही रग
अनग यही रहता छुपकर,
तब तो तरग उठ रही
मृदगो की धीमी आवाज
बीन की मधुर-मधुर झकार
रत्न-दीपो की खिलती ज्योति
रेशमी पर्दे,
मोहक फूल सभी गुलदस्ते मे कितने अच्छे !
जिन्दगी ! जरा पहचानो, स्वर्ग यही है क्या
जो आँख देखती बिल्कुल वही सही है क्या ?

इतने मे चन्द्रा दासी धीरे से आई,
बोली झुककर—बाहर अमात्य है खडे हुए !
आम्रा ने उत्तर दिया—कहो,
नर्त्तकी किसीसे नही मिलेगी आज यहाँ !

वे चले गए,
कितने आए औ' लौट गए
पर राजनर्त्तकी नही किसीसे मिली
रात भर जगी रही यो सोकर भी !
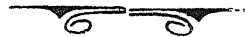
पंचम सर्ग

जब अन्धकार का भार रात ढो सकी नही
उस आसमान के सन्नाटे से एक ज्योति फूटी सहसा
अन्धा ने देखा—चाँद उग गया पश्चिम मे
सुनसान तमन्ना आँसू से खेलने लगी
माया के सँग वह बढा एक लाठी लेकर !
झकार सुनाई पडती है कुछ कानों मे
वह रात-रात भर भला जगा ही रहता है ?
कैसी पीडा हो गई
दर्द क्या इतना जिन्दा रहता है ?
आदमी याद से भी जिन्दगी काट सकता अपनी ?
सच है, मनुष्यता एक प्यार से जीवित है !
भगवान ! हृदय का घाव नही मिट सकता क्या ?
इतनी सच्चाई घायल दिल मे होती है ?
क्या करूँ
नयन भी नही
ओसवाली आँखे देखूँ कैसे !
हूँ सूरदास
किस तरह टटोलूँ दुनिया को !
भगवान ! मौत दे दो मनुष्य को लेकिन तुम
रोशनी न छीनो

नयनहीन मत करो कभी
इस से बढकर है सजा नही इस दुनिया मे !
यदि आँखे रहती तो मै कुछ कर सकता था
प्रिय चन्द्रकेतु का कुछ तो दुख हर सकता था !
आँखे रहती तो आम्रपालिका भला नर्त्तकी बन जाती ?
वह मेरे सम्मुख ही जीवन मे मुस्काती !
प्राणो से प्यार अलग न कभी हो सकता था
दोनो मे से कोई न यहाँ रो सकता था !
रोता कैसे ? मै जो रहता आँखे लेकर
अपनी सच्चाई की उडती पाँखे लेकर
मै उन्हे सातवे आसमान पर रख देता
खुशियो को अपने जीवन मे मै भर लेता !

कितना अपराध हुआ जग मे
रुक गया प्रेम अपने मग मे !
मजिल बेचारी दीप जलाती रही वहाँ
राही अकुलाता रहा यहाँ !
ऐसी भी कोई आँधी उठती है भू पर ?
आशियाँ एक उजडा सुन्दर !
यह कैसी आग लगी कि हृदय अब भी जलता
क्या कभी दर्द का सूर्य नही ढलता,—
जलता ही रह जाता जीवन समस्त ?
मेरे पतग ! पाँखो को जरा बचा लो तुम
उस दीप-शिखा के साथ कभी भी गा लो तुम !
आम्रा ने रथ भी भेजा था, तुम नही गए
क्यो नही गए ?
क्या दर्द बहुत है प्राणो मे ?
इतनी ताकत भी नही कि उड सकते हो तुम तूफानों में ?

हे चन्द्रकेतु !
अन्धा कुछ भी देखता नही
पर आँसू देख लिया करता !
अन्धे की आँखे सुनती है आवाज एक
मै मन की करुण पुकार सुन रहा हूँ कब से !
क्या करूँ
आँख के बिना मनुज मरकर ही जीवित रहता है
सौ-सौ दुख को भी एक साथ अपने जीवन मे सहता है !
सह लेता है सब कुछ दिल पर !
सुनता हूँ तुम अब पागल हो
प्रेमी को पागल सब कहता है धरती पर
सीता के लिए राम भी सच्चे पागल थे हरणोपरान्त
वृन्दावन के प्रिय कृष्ण
गोपिकाओ के लिए विकल क्यो थे ?
पागलपन मे सच्चाई दीप जलाती है
अन्तर्वेदना तडपती है, कुछ गाती है !

रूपा के चचा आए थे मेरे घर पर
कुछ कहते थे
रूपा भी तो आभा की है सहचरी
परी-सी नाचा-गाया करती है !
है कलाकार की बेटी,
बेटा, दर्द भुलाने का भी कही उपाय करो
सूने गृह मे रोशनी भरो
पतझर मे भला वहार नही आ सकती है ?
मरु मे भी तो कोयल आकर गा सकती है !
रूपा का रोना कभी नही सह सकता मै
इतना दुख में अब यहाँ नही रह सकता मै !

बूढा हूँ आँसू को पहचाना करता हूँ
आहो को खूब निकट से जाना करता हूँ
बूढा होकर भी नही प्यार को समझूँ मै ?
अन्धा होकर भी नही हार को समझूँ मै ?
झकार तुम्हारी कैसी है यह जान रहा
अन्धा हूँ लेकिन सूरत को पहचान रहा !
आदमी बहुत कुछ से कुछ जाना जाता है
कुछ जान-जान कर तब पहचाना जाता है !
रूपा के आँसू का न तनिक अपमान करो
सूने जीवन से अच्छा है कुछ गान करो !
इज्जत है मेरी भी तुम इसका हाथ धरो
सूनी है उसकी माँग स्नेह-सिन्दूर भरो !
आती न तुम्हे है नीद , किन्तु मै सोता क्या ?
आँखे रहती तो वज्रपात यह होता क्या ?
यह अन्ध कण्व, बेटी का रूप न देख सका
चलने की बेला एक अश्रु भी गिरा नही
कितना पापी हूँ
एक शब्द भी कहा नही
सोलह वर्षो तक उसे पालता रहा यहाँ
बचपन की आँखे देख सका
पर हाय, राम !
खिलती-सी कली न देख सका इन आँखो से !
सुनता हूँ मेरी शकुन्तला
उस शकुन्तला से अच्छी है
साक्षात विधाता के हाथो से गढी गई इसकी सूरत !
कैसे अच्छी हो नही
कण्व की मूर्ति एक जगल की थी
मेरी तो वैशाली की है

अमराई मे मैने पाई थी उसे यही
तब तो माया ने आम्रा उसका नाम रखा !
मेरी बेटी कितनी अच्छी
तू चली गई
रहती कैसे ?
अन्धो के घर मे परी कभी रह सकती है ?
यो आई थी, यो चली गई
वासन्ती हवा वसन्त-काल तक ही बहती
क्या इन्द्रधनुष भी बहुत देर तक रहता है ?
अन्धे के घर मे सुन्दरता
ईश्वर कैसे रख सकते थे ?
उनकी भी तो मर्यादा है
नदियाँ समुद्र मे मिलती है !
मेरी बालूवाली धरती भी गीली है, कुछ गीली है
आम्रा की एक मधुरिमा मेरे घर मे है
वैशाली ! इसको नही भूलना कभी
आम्रपाली गरीब की बेटी है !
कुटिया की अनुपम शोभा
मेरे घर का बुझा चिराग,
गई है राजभवन की छाया मे !
मेरी माया रो रही, हाय बोलती नही
माँ बनकर भी वह पत्थर-सी है बनी हुई
उसकी निर्झरिणी कौन देखनेवाला है ?
यदि गुजर गई
तो यह अन्धा—बूढा अन्धा
किस ओर कहाँ जाएगा रे
यह मेघ कहाँ छाएगा रे !

भगवान ! आदमी परीशान क्यो रहता है
कैसे असह्य पीडाओ को वह सहता है !
खामोश जिन्दगी क्यो है इतनी अकुलाती
कॉटो मे भी तितली आकर है मुस्काती !
रूपे ! मदिर मे जाकर पूजा कर मन से
वदना नही बेकार कभी भी होती है
जिन्दगी ! व्यर्थ तू आग लगाकर रोती है !
मदिर मे जा यदि फूल नही मुरझाए है
दरवाजे पर अकुला यदि बादल छाए है !
यह सूरदास बन सकता एक पुजारी है
तू स्वय सोच ले अन्धा मगर भिखारी है !
देवता सामने आएगा तो अन्धा क्या पहचानेगा
वाणी होगी जब मौन भला मुद्रा को कैसे जानेगा ?
देवता बोलते नही सभी से जीवन मे
सुनता हूँ तुरत लुप्त हो जाते है क्षण मे !
इस अर्ध रात मे मदिर क्या खुल जाता है ?
क्या ऑसू से भी शुभ्र चरण धुल जाता है ?
देवता, जरा अन्धे की इज्जत रख लेना
इतना ऑसू मेरी ऑखो मे भर देना !
मै अन्धकार मे नही
चॉदनी उगी तभी तो आया हूँ
पर बूढा हूँ
मै इसीलिए घबराया हूँ !
सुनता, यौवन के मदिर मे बूढे न कभी आ सकते है
क्या सचमुच वृद्ध बहारो मे
झोके ही झोंके खाते ह ?
अन्धा जो हूँ ! तूफान बहुत से देखे है !
अभिशापो से उठनेवाले बरदान बहुत से देखे है !

फूलो पर मरनेवाले भी नादान वहुत से देखे है
जिन्दा रहकर मरनेवाले ईमान बहुत से देखे है !
चुप-चुप बहार मे रोते से उद्यान बहुत से देखे है
खिलती कलियो के आँगन मे वीरान बहुत से देखे है !
सच कहता हूँ देवता,
सूझता नही मुझे कुछ जग मे
पर एक प्राण के दीपक से
आँधी, अन्धड
बादल, बिजली
अन्याय, न्याय
वह पुण्य, पाप
झझा, झोके
सगीत, प्रीत
कुछ हार जीत
मोहक, मदिरा
चाँदनी, धूप
नन्हे शबनम
हरियाली, डाली, फूल-पत्र
मर्मर झकोर
उठती हिलोर
मृदु शोर
भोर, सध्या
तारा
हिलनेवाली कुछ कली
शुभ्र शेफालीवाली गली
भली आँखों की पाँखो की पुकार
वह प्यार
प्रणय-झकार

हृदय गुजार
धार प्रिय आँसू की !—
भगवान ! तुम्हारी दुनियाँ के सामान बहुत से देखे है
सच कहता हूँ मैने भू पर तूफान बहुत से देखे है
मदिर मेरा आ गया द्वार खोलूँ कैसे
झकृत वीणा के बादल से बोलूँ कैसे ?
सगीत बद कर देना भी अपराध एक
देवता रज हो जाते है !
इससे बढकर आशा की लहर नही कोई
यह विरह-मिलन दोनो मे बजता रहता है
प्राणो की ध्वनि से जीवन सजता रहता है !
दुनिया बनने के पूर्व बजी होगी वीणा
गीतो से ही जानती मृत्यु भी है जीना !
माया ने देखा
रूपा भी बैठी है उस दरवाजे पर
किकिणी बजी
अन्धा उसको पहचान गया
है प्रेम बहुत पावन
इसको वह मान गया !
लगता है उसकी आँख सभी कुछ देख रही
तब तो रूपा के मस्तक पर है हाथ एक
उसकी उगलियो मे कुछ आँसू लिपट गए
वह काँप उठा
फिर भी अधीर वह नही
वृद्ध का हृदय न दुर्बल होता है !
ज्ञानी निर्झर ही नही
धैर्य का सिन्धु देखनेवाला है
प्रत्येक लहर को बहुत परखनेवाला है !

इतने मे रूपा भाग चली
अन्धा बोला हँसकर जैसे—तू चली गई ?
शर्मीली तू भी है आम्र की तरह बहुत !
मदिर का द्वार बन्द ही है
तू भाग गई ?
आखिर पूजा तो तेरी ही है री
अन्धा बेचारा भीख माँग कर जीता है
फिर तेरी आँखे, मेरी आँखो मे भी कितना अन्तर है !
सुन्दरता और समाधि एक-सी हो सकती ?
मेरी रुखरी बोली, तुझमे सगीत भरा
तू तो बहारवाली है रे
मोहक पुकारवाली है रे !
कोयल की तरह कूकती है
पाँखो पर ढोकर फूल नही उड सकती है ?
माया कहती है, तू तो बडी चमकती है !
अच्छा है तू जो चली गई
सुन्दरता के सम्मुख सुन्दरता की चर्चा होती न कभी !
फिर बूढा तो पर्दा से ही कुछ कहता है
इसलिए युवक तीखी बाते भी सहता है !
वर्ना, कूलो की बात धार क्या सुनती है ?
मुरझाई कलियो को न जवानी चुनती है !
चूने कैसे ?
जब तक बहार है, फूलो की है कमी नही
जब कलियाँ ही न रहेगी तो फिर जमी नही !
फिर भी मै बूढा बाप यहाँ तक आया हूँ
मदिर के सम्मुख बादल लेकर छाया हूँ !
देवता ! बद क्या गीत नही होगा तेरा ?
झकारो की भाषा तो मै हूँ समझ रहा

कुछ सोच रहा हूँ—कला दर्द से आती है
आहो का तिनका लेकर बुलबुल गाती है !
टूटे दिल की आवाज मधुर हो जाती है
वेदना गीत के घर मे ही सो जाती है !
क्या इसीलिए आम्रा महलो में चली गई
झकार सजाने को ही क्या वह जली गई ?
गम के घिरने पर ही आवाजे आती है ?
चाँदनी रात भी अन्धकार पर छाती है !
जिन्दगी मधुर होती है क्या जल जाने से ?
सगीत सुरीला होता क्या अकुलाने से ?
बेचारा अन्धा गीत प्रीत के बीच खडा
किसका मै पकडूँ हाथ बहुत हूँ डरा-डरा !

माया ! तू तो औरत है
कुछ कह सकती है ?
विद्या-विहीन नारी क्या समझे बारीकी ?
फिर भी माया तो माता है
नारी का हृदय पुरुष क्या अब तक जान सका ?
बहनेवाली वह नदी भला पहचान सका ?
मेरी माया छल कपट नही जानती कभी
जो कुछ कहता आया हूँ बस मानती वही !
मेरी पुकार पर माया मरनेवाली है
मेरी आज्ञा पर सब कुछ करनेवाली है !
रोहिणी नही जो चिल्लाए
घर की बाते बाहर गाए !
फिर भी वह ममता रखनेवाली है भोली
हर रोज भरा करती भिखारियो की झोली !
आम्रा को कितनी माना करती थी आकर
आम्रा भी खाती थी उसके घर मे जाकर !

खिडकी से जब चॉदनी झॉकने लगी जरा
झकार बन्द जब हुई
पुकारो से ही द्वार खुला सहसा !
वह चन्द्रकेतु अन्धा से लिपट गया आकर
कमजोर उॅगलियॉ दाढी को देखने लगी
पागल के केश बहुत जल्दी बढ जाते है
मरनेवाले तो जीवन मे मर जाते है !

सब कुछ कहकर अन्धा कुछ भी कह सका नही
देवता रूप की धारा पर बह सका नही !
किश्ती लेकर मल्लाह वहॉ रह सका नही
आकुल तरग की चोट हाय, सह सका नही !

तो क्या रूपा की नदी सूख ही जाएगी
पतझर की कोयल कभी नही क्या गाएगी ?
इस दीप-शिखा मे ज्योति न उससे कुछ कम है
जलनेवाले ! उसके कारण इतना गम है ?
जीविन देवता ! न तुम भी पत्थर बन जाओ
बादल आया है मिलने अब तुम भी छाओ !
आकाश प्रतीक्षा करता है सूनेपन मे
क्यो अकुलाते हो प्राण हाय, इस यौवन मे ?
पत्ते खाकर भी तो आखिर जिन्दगी गुजारी जाती है
दीपक को बुझा दिया जाता जिस समय चॉदनी आती है !
नर्त्तकी-भवन मे भेजी थी
तुमने तस्वीरे तीन कभी,
उस महामात्य ने तुम्हे सहस्रो मुद्रा दी
जिसको तुम स्वीकृत कर न सके !

सुनता हूँ उन तस्वीरो मे
दो चित्र आम्रपाली के थे
सुनता हूँ एक चित्र मे थी केवल समाधि
बहती-सी एक नदी-तट पर अमराई थी
जिसके नीचे कोई लडकी थी खडी वहाँ !

इतनी अच्छी तस्वीर बनाओ मत बेटा !
दुनिया मे बहुत, बहुत अच्छा होना भी है अपराध एक
इतने दर्दीले गीत कभी गाया न करो
इतने सुन्दर सपने मे तुम जाया न करो !
रूपा को दो अब शरण,
चरण वह छूएगी
अन्यथा जिन्दगी भर यह बेटी रोएगी !
बेटा ! टहनी पर दो कलियाँ भी खिलती है !
एक ही दीप पर दो परवाने आते है
एक ही राग मे दो रागिनियाँ भी आती
एक ही नजर से दो सपने टकरा जाते !
एक ही गगन मे
पूरब, पश्चिम से आकर
ऊषा-सध्या की एक लालिमा लेकर ही
मन के दो बादल छा जाते !
गीली जमीन मे हरियाली उग आती है
ऐसे वन मे भी कुछ कलियाँ खिल जाती है !
तुम चित्रकार हो बेटा !
अन्धे की भी कुछ बाते समझो
रोशनी प्राण की बडी निराली होती है
नयनो की घटा बहुत ही काली होती है !
मुझको निराश मत करो

हताश न होने दो इस अन्धे को !
मेरी माँ ने 'दृगसिन्धु' नाम देकर ही मुझे पुकारा था
वह सच निकला
मैं तो प्रकाश का पारावार निरखता हूँ
लगता है मेरी ज्योति दीप से सुन्दर है
बेटा ! मेरा घोडा पर्वत के पथ से जाता था दौडा
गिर पडा अचानक खाई मे
औ' फूट गई मेरी आँखे
यह अन्धा वैशाली का भीषण योद्धा था !
पर जब से तन की आँख गई
मन की आँखे खुल गई जरा !
साँसो की किरणो से भी मैं पढ लेता हूँ
कुछ देख लिया करता हूँ कानो से सुनकर
ये मुँदे नयन दो दर्पण है
जिसमे दुनिया की परछाई पडती रहती है दिवस-रात
मैं समझ लिया करता हूँ कुछ-कुछ मधुर बात !
बेटा ! मैं भी तुकबन्दी करता था पहले,
लगता है जैसे, उषा दृगो को खोल रही
अरुणाई की चादर को फेक रही कर से
नीले बिस्तर पर अँगराई ले रही अभी !
क्या सच है चन्द्रकेतु ? बोलो
क्या मेरी आँखे धोखा खानेवाली है ?
तुम चुप क्यो हो बेटा !
मुसकाओ जीवन मे
ले जाओ अपने मन को मोहक मधुवन मे !
बूढा न चाहता कभी जवानी रोए भी
अन्धा न चाहता कोई मोती खोए भी !

क्या सचमुच अन्धे ने अधरो को जगा दिया ?
पानी भी पीता हस कभी ?
क्या प्रेम किया भी जाता हे
आँसू को भला निकाला जाता है दृग से ?
कुछ ऐसी ही बातो को लेकर
घर से निकला चन्द्रकेतु !
वह बूढा, अन्धा बडी-बडी आशा लेकर जा रहा आज !
ओ चन्द्रकेतु !
तुम क्यो जाते हो साथ-साथ ?
इस नौका पर ही पार उतर जाओगे क्या ?
सुन लिया ?
अन्ध की आँखो मे तो सागर है !
जब लहर चाँद को देखेगी तब क्या होगा ?
उन्मत्त ज्वार !
उन ज्वारो में क्या प्यार सुरक्षित रह सकता ?
यह तुम सोचो,
अपनी बाते अपनी ही दुनिया मे रहती !
लौटो जल्दी
पर चित्र बनाना भी तो है
क्या सात रोज मे आम्रपालिका—
की नूतन तस्वीर पूर्ण हो जाएगी ?

षष्ठ सर्ग

जब चन्द्रकेतु ने सपने की साँसे छू दी
आवरण देह का हटा दिया
झकझोर दिया मृदु वक्षो को
कोमल कपोल पर आँसू से लिख दी कविता
चुम्बित कलियाँ जब हिलने लगी हिलोरो से
नौका तरग पर जब वह निकली धीरे से
जब चाँद छुप गया बादल मे
अँधियाले मे केवल तारे ही बचे शेष,
उस अर्ध निशा के सपने मे टूटी निद्रा !
नर्त्तकी चौक कर इधर-उधर देखने लगी
सामने दीप जल रहे मन्द
सौन्दर्य-कक्ष मे मधुर सुगन्ध भरी कितनी !
चन्द्रा ! चन्द्रा !—वह बोल उठी !
दासी आई
क्यो स्वय रूप को देख तनिक सकुचाई भी
लज्जित अधरो से बोली फिर—"आ गई देवि !"
लेकिन तब तक नर्त्तकी नयन को मूँद चुकी
क्षण मे फिर जाग गई
आँखो मे धूप-छाँह-सी आई क्या
इस बार दृगो के सम्मुख दासी ही केवल !

तब आम्रपालिका बोली—चन्द्रे ! जा जल्दी
ले आ मदिरा का पात्र आज
जीवन मे पहली बार सुरा का पान करूँ
बिजली के पानी मे देखूँ कितनी ताकत है भरी हुई !
कमजोर नसो मे क्या-क्या करती है देखूँ
नीली आँखो मे कितनी लाली आती है
देखूँ शराब साँसो मे कितनी गाती है
जा, जा, मेरी इच्छा मदिरा की प्यासी है
सुनती हूँ यह तो कामदेव की दासी है !
जिन्दगी इसे पीकर सब कुछ खो जाती है
गम और खुशी मिल एक चीज हो जाती है !
बीमार आम्रपाली की दवा यही है अब
प्राणो तक आनेवाली हवा यही है अब !

री, चुप क्यो है ?
तू खडी-खडी क्या देख रही ?
कसमे जो खाई, टूट गई
जिन्दगी परिस्थिति से लाचार हुआ करती
करुणा ही तो आखिर तलवार हुआ करती !
जा, जा, कुछ तेज सोमरस दे जल्दी लाकर
जी सकती नही जवानी केवल फल खाकर !
पीकर भी दर्द भुलाकर रक्खूँ प्राणो मे
उड़ने दे मन को मदिरा के तूफानो मे !
मै राजनर्त्तकी हूँ, कुछ पीना पडता है
सौ-सौ कुमार पर मर कर जीना पडता है !
वैशाली की साँसे मेरे ही स्वर मे है
चन्द्रे ! है स्वर्ग नही बाहर इस घर मे है !
मै दीप-शिखा हूँ एक सहस्र पतगो की

किश्ती हूँ मै झूमती असख्य तरगो की।
मदिरा भी पीऊँ नही—
मुग्ध होकर भी जीऊँ नही ?
फटे दिल के वस्त्रो को हाय,
तनिक सूई से सीऊँ नही ?
चुभे है बहुत प्यार के खार
द्वार देखूँ किसका ?
गगा की धारा गर्मी मे क्या रुक जाती ?
नयनो की इन्द्र-धनुष-शोभा न कभी भी मिट पाती !
मेरी पहली तस्बीर बडी मतवाली है
उन आँखो मे तो प्रेम-सूर्य की लाली है।
जो रोज सुबह-सध्या मे कुछ तो कह जाती
आम्रा अपनी निर्मल धारा पर बह जाती।
कोई विधान भी नही चन्द्र को जो घेरूँ
प्रज्वलित प्राण को कैसे मै इतना हेरूँ ?
वैशाली की एकता आम्रपाली मे है
नीला-नीला आकाश इसी लाली मे है।
है एक ओर प्रिय देश, प्रेम है एक ओर
आम्रे ! सहना है जीवन भर झकझोर-झोर !
रूपा आई थी चली गई कुछ कहती-सी
मै उसे देखती रही वेदना सहती-सी !
नारी नारी का प्यार नही दे सकती है
कीमती अश्रु की धार नही दे सकती है!
अपना अनुपम उपहार नही दे सकती है
बजनेवाली झकार नही दे सकती है।
प्राणो का वह ससार नही दे सकती है
जिन्दगी भले दे सकती है अगारो को
जीनेवाली तलवार नही दे सकती है !

नर्त्तकी बन गई तो क्या है ? नारी तो हूँ
हूँ मिलनमयी यदि नही, विरह-प्यारी तो हूँ !
मै चाँद-सितारोवाली रात नही लेकिन
कम-से-कम शबनमवाली अँधियारी तो हूँ !

तुम माफ मुझे करना दीदी,
मै सब कुछ दे सकती पर दिल का चाँद नही
आम्रा सुधियो की शय्या पर ही सोती है
इस राजमहल मे एक झोपडी रोती है !
प्राणो पर जलनेवाला दीप बुझा दूँ क्या
अपनी किस्मत मे खुद ही आग लगा दूँ क्या ?
अन्तिम साँसे भी प्यार लिए उड जाती है
मरने पर भी कोयल की आत्मा गाती है !
ससार नही आसान, पहेली है टेढी
जिन्दगी मौत की एक सहेली है टेढी !
मदिरा पीकर भी दर्द बढाया जाता है
हँसकर भी दृग को बहुत रुलाया जाता है !
अच्छी शराब है !
और जरा दे चन्द्रवती,
मस्ती के घोडे पर भी मै चढ सकती हूँ
तैरना बहुत जानती, नदी की धारा पर !
फिर रिक्त पात्र को अब भर दे
इस अर्ध रात मे भी वीणा झकृत कर दे !
जिस सुर मे हूँ, उस सुर मे ही कुछ कह चन्द्रे !
तू आज भोर तक मेरे ही सँग रह चन्द्रे !

री बत्ती क्यो बुझ गई तुरत ?
ह. ह. ह ह !

घवरा न तनिक वालिके !
नई यह वात नही
ग्राशा के जीवन मे बत्ती बुझती ग्राई है वहुत बार
यह नही तिमिर से डरती है !
मन का चिराग जव जलता है,
तो छोटे-छोटे ये दीपक बुझकर ही क्या कर सकते है ?
मेरे वावा ग्रन्धे होकर भी रोज चिराग जलाते थे !
सूझता नही था कुछ भी फिर भी कुछ फूल तोड ही लाते थे !
चन्द्रे ! तेरे दिल मे भी कोई है चिराग ?

शरमाती है ?
नारी भी नारी के सम्मुख शरमाती है ?
लोचन मे इतनी लाज भरी रहती है क्यो ?
नारी इगित से ही सव कुछ कहती है क्यो ?
सुनती हूँ कलियाँ ग्राग छुपाकर रखती है
दिल मे ही ग्रपना फाग छुपाकर रखती है !
भौरे को कहकर क्या होगा मन की बाते
कह जाएँगी भीगी पलकोवाली राते !

तूने दीपक को जला दिया ?
बुझकर भी बत्ती जल उठती है जीवन मे !
रोशनी जिन्दगी को न छोड सकती है यो,
दुनिया की बडी लडाई लडती यही एक !
ला, सुरा ग्रौर थोडी दे दे
ग्रव तक तो केवल एक गुलाबी नशा चढी
दो-दो गुलाब टकराते है !
देखूँ किसकी पखुड़ियाँ झर जाती जल्दी
क्या नीद मुझे ग्रा सकती है ?
मदिरा पीकर भी घटा कही छा सकती है ?

जा बजा बीन
रगीन रागिनी को अब आमत्रण कर दे
तो तीन दासियों को धीरे से अभी जगा दे
इसी समय मै नाचूँगी
लम्बे-लम्बे दर्पण मेरे दर्शक होगे
कम-से-कम सौ दीपक को अभी जला चन्द्रे!
खुशियो के वक्त चिराग जलाए जाते है
गम की वेला मे गीत छुपाए जाते है!
आनन्द आज उमडा है मेरे आँगन मे
बिजली ही बिजली चमक रही मेरे मन मे!
देखी है ऐसी रात कभी?—
नभ मे बादल हो नही, सिर्फ बिजली ही हो
पेडो मे पत्ते नही, हजार कली ही हो!

अब चढा नशा
हर दिशा दिखाई पडती है इन आँखो से,
सैकडो चाँद है खिले हुए
आपस मे सब है मिले हुए!
कोई तारो का हार पिन्हा देता आकर
कोई प्राणो का द्वार सजा देता आकर!
कोई अन्तर मे ज्वार उठा देता आकर
कोई मेरी तलवार दिखा देता आकर
कोई मन की झंकार जगा देता आकर!

हो छुपे कहाँ हे इन्द्र!
उर्वशी आज स्वर्ग मे नाच रही
तुम किस धरती मे विचर रहे?
यौवन मेरा डगमगा रहा
मै मदिरा पीकर नाच रही

ऐसा भी नृत्य नही तुम देखोगे आकर?
गिर जाऊँगी तो कौन सँभालेगा मुझको?
डगमग घडियो मे तुम सब कुछ छू सकते हो
उसमे भी प्रिय अधिकार तुम्हारा ही तो है!
जिसने आँखो को चूम लिया
है वही देवता यौवन का—
इस जीवन का!
पाँखोवाली यह भरी जवानी गाती है
आँखोवाली रानी बहार मे आती है!
क्या नशा चढा
ओ दर्पण! मेरी छाया भी छू सकते हो?
साँसो से ही हिल जाते हो
तुम टूट-टूट कर गिर जाओगे नीचे क्या?
यौवनवाली पूर्णिमा रात भू-कम्प लिए ही आती है
पुष्पित वसत की कोयल केवल आसमान में गाती है!
ओ चाँद!
आज का नृत्य दिखाई पडता है परछाई मे?
तो चित्र बना लो
ऐसा नृत्य नही होगा फिर जीवन मे!
यह मदिर लहर—
तो एक बार ही आती दुर्लभ-यौवन मे!
कचुकी खोलकर नाच रही
कुछ बोल-बोलकर नाच रही
तूलिका नही रखती हूँ तो
कुछ रग घोलकर नाच रही!
रगो से ही तो चित्र बनाते हो आखिर
विश्वास करो
ऐसा न रग मिल पाएगा!

यह आसमान से लाई हूँ
तब एक निराली प्याली पाई है मैने
जिसमे शराब का पानी है
यौवन की सभी कहानी है!
वे सात नही सैकडो रग की रानी है!
तूलिका रग की माया पर गा सकती है
कल्पना प्यार के साथ-साथ आ सकती है!
मजबूत उँगलियाँ फडक उठेगी लहरो से
तुम इसे मजाक नही समझो,
ऐसा न रग मिल पाएगा सुन्दरता का
इसमे अनग की नग्न वधू है तैर रही!
देवता कौन वह इसे हाथ से छू ले जो!
तुम इसे कभी भी ले सकते
मै इसे सुरक्षित रखती हूँ!
यह रग मिलेगा
मगर तरगे नही कभी
ऐसी उमग तो एक वार ही आती है
यौवन की बुलबुल एक बार ही गाती है!
सभव है, मदिरा और कभी दे दे तरग
मै ठीक आज के जैसा ही भर लूँ उमग
कल्पना एक टकराए मेरे सग-सग!
सच है, मनुष्य की आँखे यदि अच्छी रहती
आवरण नही रखती नारी
पर आग-आग से मिल जाती
दो घटा परस्पर मिल कर ही बिजली लाती!
पर्दा मे रह कर सुन्दरता खिल जाती है
थोडी भी हवा चली कि कली हिल जाती है!
लगता है यह जिन्दगी बनी है मदिरा से

आने के पहले साँस जरा पी लेती है
रहता है जब तक नशा स्वय जी लेती है!
प्राणो मे यह गुदगुदी कहाँ से आ जाती
यह कैसी साँसे है कि आँख शरमा जाती!

मन समझ गया आदमी आग से जीता है
मरने लगता है तभी सुरा वह पीता है!
क्या मै मरने लग गई?
नही!
साँसो की गरम हवा से मै अकुला जाती
बिजली हूँ तब तो आसमान तक छा जाती!
मेरी अँगराई देख सभी जल सकते है
साँसो से लाखो लाख दीप बल सकते है!
यह राजनर्त्तकी क्या साधारण नारी है?
वैशाली की समस्त आँखो की प्यारी है!
तारो मे मेरा चाँद चमकता रहता है
मेरे यौवन का स्वर्ग गमकता रहता है!
आखिर वैशाली की विख्यात सुन्दरी हूँ
प्रत्येक प्राण को छूनेवाली लहरी हूँ!
चिनगारी हूँ तब तो कुमार जल गया तुरत
अधखुली आँख का तीर निराला होता है
ओ कुसुम सेन! इस तरह न ताका करो कभी
हो फूल तुरत कुम्हला जाओगे लपटो से
इस आम्रपालिका के जीवन मे आग सिर्फ
जल जाओगे, जल जाओगे
मेरी आँखो मे और किसी के लिए नही कुछ भी आँसू,
आँसू की भी मर्यादा है!
तुम कोमल, सुन्दर, वीर किन्तु तुम धीर नही

तुम महामूर्ख !
मेरी सुन्दरता नही तुम्हारे लिए रखी
मेरी बहार बाहर न कभी आ सकती है
इज्जतवाली यह घटा
पराए नभ मे क्या छा सकती है ?
गगा सूखी है अभी नही
यमुना मे लहरे उठती है
रोशनी तुम्हारे घर मे है, फिर यहाँ चले क्यो आते हो
गर्मी है अगर नही दिल मे तो मदिरा क्यो न पिलाते हो ?
ठगते हो फूलोवाली को,
तुम ठीक क्यो नही कर लेते उस जाली को !
निश्चय तुम दुर्बल नाविक हो
अपनी भी किश्ती नही चला सकते आखिर !
इस आम्रपालिका के घर मे दर्पण की कमी नही देखो,
ओ कुसुमसेन !
मै सबकी परछाई की भाषा पढती हूँ !
इस वृज्जिसघ के सात युवक
आँखो मे आग लगाते है
मदिरा की नदी बहाते है !
मै महामात्य से कह दूँगी
सीमित आसव ही पिएँ युवक
ऐसा विधान भी बने एक !

नर्त्तकी नाचकर बैठ गई है शय्या पर
वीणा अब भी बज रही पार्श्व मे मन्द-मन्द
वातायन से दीखता भोर का वह तारा
पूरब मे अब तक नही लालिमा छाई है
तोते से कहती है मैना—सुन रे बुद्धू !

क्या बात कि रानी जगी रही ?
सपने मे ऐसा जादू कौन चलाता है ?
उत्तर मिलता है—वही प्यार !

पौ फटते ही दासी आई,
झुककर बोली धीरे सनम्र !—
हे देवि ! प्रसाधन-कक्ष चले
मधुपर्व आज ही है रानी !

तब तो मदिरा पी ली मैने मालती, आज
दो क्षण रुक जा मै आती हूँ,
जा प्रस्तुत कर
केवल गुलाब-जल मे ही आज नहाऊँगी
उसमे कुछ मदिरा रख देना
री शहनाई बज उठी ?
लोग अब तुरत यहाँ जुट जाएँगे
जा चन्द्रा से कह बीस दासियाँ तुरत भेज दे वह नीचे
सगीत-भवन मे सभी सचिव को बैठाए,
री ! केलि-महल मे सभी कुमारो का स्वागत हो यथायोग्य,
बूढे सदस्यगण अतिथि-वास मे ही आएँ,
औ' नगर-सेठ आनन्द-भवन मे ही बैठे,
मै आज देर से निकलूँगी
मधुपर्व सभी पर्वो का है सम्राट
प्रसाधन-गृह मे होगी देर मुझे
मजरियाँ आई या कि नही ?
फूलो के वन्दनवार लग गए द्वारो पर ?
सर्वत्र सुगंधित शुभ्र धूप तो जलती है !
आ रही गमक ! · · · · · ·

चन्द्रा ने कहा कि कुसुमसेन आ गए सभी साथी-समेत!
तो जा मदिरा से कर स्वागत—बोली आम्रे—
यौवन को खूब जला दे चचल बिजलो से
आकुल पतग को आग खिला दे हॅस-हंसकर
नस-नस म ज्वाला रख द अपनी आँखो से!
मूरख मानव!
नारी का मीठा क्रोध अभी जानता नही
ओ' देख चन्द्रिके! उनके सभी साथियो को भी
खूब पिला देना मदिरा!
वैशाली के वे रक्षक है
वे सुरा-सुन्दरी के मतवाले पोषक है।

आश्चर्य चकित चन्द्रा धीरे से चली गई
सोचती हुई—मेरी रानी तो देवी है
कितनी विचित्र इनकी बाते
कितना अनुशासन से स्वागत करतो सबका
वैशाली की कुलवधुएँ मिलने आती है!
वह रूपा कौन कहाँ से आई थी उस दिन?
कितनी रोई!
कितना दुख था,
मेरी रानी क्यो सिसक पडी?
दीदी कहती थी उन्हे,
बहन थी क्या इनकी?
पर रूप-साम्य था नही तनिक
कोई सहचरी रही होगी
वैशाली की नारी को कष्ट हुआ कैसे?
घर का कोई आदमी मरा होगा उसका!
भगवान करे वह मुसकाए

रोने से मुझको बहुत घृणा है जीवन मे!
पर कुसुमसेन जब आते है
तब क्यो लज्जित हो जाती हूँ
मन ही मन मै क्यो रोती हूँ?
यो कभी-कभी अँगराती हूँ!
क्यो कुसुम बहुत देखा करते है रानी को?
उनकी आँखे तो ठीक नही
वे अधर फडकनेवाले है
छू देते है· · · ·
उस रात न रानी मिली
हाय, वे चले गए!
क्या रानी को भी उनकी आँखे· · ·
नही, नही, मेरी रानी तो देवी है!
वे चन्द्रकेतु का पता पूछते थे मुझसे
उनकी आँखे थी लाल बहुत
क्यो उससे ईर्ष्या करते है?
इसलिए कि उसके चित्र यहाँ है टँगे हुए
बेचारा कितना ऊँचा है वह कलाकार
वैशाली के उस पुरस्कार को ठोकर मार दिया उसने
रानी से उसका क्या कोई है गुप्त प्रेम?
रानी उसके चित्रो को क्यो देखा करती?
सैकडो चित्र है यहाँ
मगर उन पर न नजर दौडती कभी!
निश्चय रानी की आँखो मे वह बैठा है!
यदि एक बार भी आता तो देखती उसे
रानी का राजा निश्चय सुन्दर होगा ही!
क्या कुसुमसेन से भी ज्यादा?
निश्चय इनसे तो वह ज्यादा सुन्दर होगा

अन्यथा आम्रपाली देवी अपनी बाँहे तो फैलाती
सुन्दर कुमार के सग-सग नर्त्तकी-भवन मे तो गाती !
क्या वह न यहाँ आ सकता है ?
देवी चाहे तो साथ यहाँ गा सकता है !
पर वैशाली का नियम मना जो करता है
बेचारा चित्र बना कर ही क्या मरता है ?
हाँ, याद पडी,
रानी ने रथ भी भेजा था
पर आ न सका !
क्या इतना स्वाभिमान उसमे ?
सचमुच वह सच्चा शिल्पी है वैशाली का !
आकुल मानव तो,
एक प्रेम के लिए क्या न क्या करता है
फिर क्यो स्वदेश के लिए चन्द्र यो मरता है ?
ये कुसुमसेन क्यो चिढते है ?
री गिरी, ओह ! गिर गई फिसल कर सीढी से !
किसने हँसकर कुछ व्यग किया ?
ओ आप ?
कुसुम भी हँसते है ?
आइए, इधर है केलि-महल !
यह सुरा !
सुन्दरी के हाथो से और पीजिए एक बार
फिर एक बार
कुछ और जरा
बस इतना ही ?
मेरी इच्छा से तनिक और
अब थोड़ा है !
क्यो रहे शेष ?

यह भी ले ले
मधु पर्व आज
देवी निकलेगी पीत-वस्त्र से आवृत हो,
बरसेगे उन पर कुसुम और कुमकुम दोनो
है नगर सजा
हर जगह सुरा विकती,
पर ऐसी नही कही !
शहनाई बजती मधुर-मधुर !
कितने बाजे बज रहे आज
हाथी, घोडे, रथ सभी खडे
सैनिक आए
वह महामात्य भी आएँगे
मीनध्वज फहरा रहा नर्त्तकी के रथ पर
निकलेगी जब
इन्द्रासन भी कँप जाएगा !
कुछ और पीजिए कुसुमसेन,
आखिर शोभा-यात्रा सध्या तक लौटेगी !
विश्राम करेगे लोग राज्य-अमराई मे,
देवी का शिविर मध्य मे है
सगीत वहाँ पर भी होगा
उजले घोड़े के रथ पर देवी जाएँगी
सूरज की किरणे नील मुकुट पर चमकेगी
कुलवधुएँ फेकेगी प्रसून
उल्लास-हास का यह दिन है !
ऐसा न करे
कुछ और पिएँ
मेरी बाँहे अति दुर्बल है
आँखो मे कुछ पड गई हाय,

रुकिए, रुकिए मैं आती हूँ
ऊपर का दर्पण बहुत बडा है
अभी, अभी आती हूँ—
हे प्रिय कुसुमसेन ....।
इतनी भी मदिरा कोई मानव पीता है?
लडखडा रहे है पैर,
हाथ कुछ छूना चाह रहा, छी-छी!

सप्तम सर्ग

कितने वसन्त आए, कुछ कहकर चले गए
कितने पावस आए, छाए
बिजलियाँ चमक कर अन्तरिक्ष मे कहाँ-कहाँ छुप जाती है
चातकी मगर हर साल स्वाति के लिए बहुत अकुलाती है !
जो याद प्राण मे छुप जाती, वह याद प्राण मे रहती है
निर्झरी वेदना की साँसो के ही समीर से बहती है !

जिन्दगी ! आज है शरद-पूर्णिमा-रात खिली
झरते धरती पर सुन्दरता के हरसिगार
आकाश रास कर रहा स्वय
वह चाँद सितारो की परियो के बीच खडा
लेकिन धरती क्या सूनी है ?
यह आम्रपालिका स्वर्ग-भवन मे रहती है !
कितना मादक उद्यान
सरोवर मे विशुद्ध है कुमुद खिले
हसो की उजली पाँखे करती है क्रीड़ा
फव्वारो से मोती झरते
मिल रही चोच से चोच मृदुल
सपने मे खोई है मरालिका की आँखे
जिन्दगी प्यार करती है आँखे मूँद-मूँद

चाँदनी फूल की डाली को गुदगुदा रही।
मन की खजन उड रही अकेली फुर्र-फुर्र
जी करता है सो जाऊँ कासो मे छिपकर
ओ चाँद। तुम्हे आना होगा मेरे समीप
चन्द्रे। चन्द्रे। कौमुदी-महोत्सव है
तू मदिरा पिला मुझे
खाली प्याली हो गई तुरत।
दासी शेफाली आकर बोली—हे रानी
बैठे है केलि-महल मे आकर कुसुमसेन
कुछ अतिथि और भी आए है।

जा उन्हे महल के ऊपर ले जा, आती हूँ
कौमुदी-पर्व क्या भू पर होता है पगली !
ले जा छत पर सबको जल्दी
आकाश जहाँ से साफ दिखाई पडता है
धरती का उत्सव तो वसन्त मे होता है—
आदमी प्यार पर सोता है।
पर शरद-पर्व तो अम्बर का त्योहार
प्यार की मधुर चाँदनी गाती है
सुन्दरता आकर फूलो से टकराती है !
शेफाली। काली घटा-पर्व
आकाश और अवनी दोनो के मधुर मिलन से होता है
जानती नही ?
बादल बनता है वाष्पो से
औ' वाष्प ?
सूर्य औ' धरती के आलिगन से ही बनते है
री। खुशियो मे आँसू कैसे आ जाते है ?
जब प्यार बहुत तप जाता है

ऑखो मे आकर छा जाता —
कुछ गा जाता !
इसलिए गीत के लिए प्रीत करता मनुष्य
ज्यादा मदिरा पागल ही पीता है जग मे
मदिरा पीना आसान नही
ज्वाला पर ज्वाला रख देना है कठिन काम !
जा उन्हे चॉदनी मे नहला मै आती हूँ,
चन्द्रे ! तू भी जा ! . . .

सोचती आम्रपाली मन मे—
वह अब तक यहाँ नही आया
क्या नही आज भी आएगा ?
आना होगा
अन्यथा आम्रपाली निज हत्या कर लेगी
नर्त्तकी-कुटी मेरी समाधि हो जाएगी
जिन्दगी मौत मे भी जाकर अकुलाएगी !
भेजा था मैंने गुप्त पत्र
उत्तर भी उसने दिया नही !
वाहक के सम्मुख एक बार
हँसकर ही वह रह गया स्वय
इसका क्या अर्थ हुआ आखिर
स्वीकृति ही तो !
क्या एक बार भी नही यहाँ आ सकता वह ?
सच है, मनुष्य पत्थर मे भी रह सकता है
ज्वाला-समुद्र पर जीवन भर बह सकता है !
लकिन वह कितना कोमल है
स्वर मे कितना सम्मोहन है
प्रिय ललित कला ही जीवन है !

वह राजनर्त्तकी को ठुकरा भी सकता है
पर आम्रा को ?
आम्रा तो गागरवाली है
यह तो अति शुभ्र मराली है !
आत्मा के इगित से—
चुम्बित इसके कपोल
इसकी स्मतियो की डाली है रही डोल !
वह आएगा
आता ही होगा झूम-झूम
पूर्णिमा-दीप से उज्ज्वल है ससार
प्यार की स्निग्ध चॉदनी छाई है
उस मुख्य द्वार पर दासी बैठी होगी ही
परिचित वाहक तो वही टहलता ही होगा
मेरा प्रियतम आता होगा
सुधि मे कुछ तो गाता होगा !
रह मधुर मिलन की रात
प्यार की बाते होगी खूब
जिन्दगी मे चॉदनी छुपी कैसी !
ऐसी आवाज न कभी सॉस मे आ सकती
बुलबुल कॉटो मे भी रहकर है गा सकती !

अब चलूँ
प्रतीक्षा करते होंगे परवाने
आए है जलने दीवाने !
क्या इन्तजार की घडियॉ मीठी होती है
जिन्दगी फूल के बिस्तर पर ही सोती है !
देखा करती है ऑखे तारो की जाली
चूमती होंठ को मदिरा की मोहक प्याली !

कामना कान मे कोमल गीत सुनाती है
आशा मन की इच्छा को उलझा जाती है !
ठहरो आनेवालो ! मै भी अब आती हूँ
अपने हाथो से मदिरा आज पिलाती हूँ !
मै भी तो स्वय प्रतीक्षा मे ही बैठी हूँ
जीवन की प्रेम-परीक्षा मे ही बैठी हूँ !
खुशियो की भाषा उतर रही है प्राणो मे
उड रही आम्रपाली मन के तूफानो मे !
मेरी धरती पर चॉद उतर कर आएगा
यौवन के फूलो पर ही वह सो जाएगा !

ओ कुसुमसेन ?
आ गए वहॉ से यहॉ आप ?
आइये, आज अगूठी को देखिए जरा
चॉदनी रात मे चमक रही है यह कितनी
है ! चूम लिया अधरो से ही !
इतनी मदिरा पी गए आज ?
इतना पीने से जीना भी होगा दुस्तर !
सैनिक-प्रवीर !
तलवारो का अब जग छुडाना होगा ही
वैशाली के योद्धा आपस मे लडते है
मदिरा भी इसका कारण हो सकता कुमार !
सुनती हूँ राजगृह से जादू आते है
वह वर्षकार मत्री कटुता फैलाते है !
वैशाली की एकता न टूटे याद रहे
नर्त्तकी-भवन पर नही कलक लगे आकर
जब कला वासना मे हो जाती है विलीन
तब देश स्वय जल जाता है !

जब ईर्ष्या की भावना फैल जाती भू पर
तब शक्ति-सूर्य ढल जाता है।
हे कुसुम।
चाँदनी से मनुष्य पागल भी तो हो जाता है,
इसलिए धूप है धरती पर,
सूरज को खोकर चाँद नही टिक सकता है
ईर्ष्या की आँधी मे मनुष्य बिक सकता है!
साहित्य स्वय साक्षी इसका
क्या नही महाभारत प्रमाण है कटुता का ?
दो-तीन रोज पहले आए थे महामात्य
वे वृज्जिसघ की राजनीति बतलाते थे
मै चिन्तित हूँ
नर्त्तकी-भवन तो प्राण-एकता का प्रतीक
जिन्दगी नही बीमार पडे
इसलिए गीत मै गाती हूँ
वैशाली ऊँचा उठे बहुत
इसलिए नाचती जाती हूँ।
क्या मगध-महासम्राट यहाँ आ सकते है?
कटुता के घन वैशाली मे छा सकते है?
वैशाली के यौवन को है धिक्कार
हाय, तलवार कभी भी सोती है ?
वीरता कभी भी रोती है ?
हे कुसुमसेन।
अपयश मे कला न जी सकती
क्या आम्रपालिका जीवन मे
अपमान-गरल भी पी सकती ?
वीणा लडती है युद्ध प्राण मे ही जाकर
बाँसुरी खड्ग को उत्तेजित करती गाकर!

क्या आम्रपालिका भी तलवार उठाएगी ?
क्या कला मर गई इसीलिए
कोमलता रण मे जाएगी ?
वीणा ही है तलवार कला के हाथो मे
वीणावाली वीणा ही यहाँ बजाएगी
हे कुसुमसेन, कोयल केवल
कूकते कठ से ही तो आग लगाएगी ! ....
अच्छा तो चले
चाँदनी मे हम खो जाएँ
कौमुदी-महोत्सव है,
कुछ तो नाचे गाएँ !
अपमान प्रकृति का करे नही
ज्वालाओ से हम डरे नही !
वैशाली की एकता आम्रपाली मे है
नीला-नीला आकाश इसी लाली मे है !

सब अर्ध रात मे चले गए
पर, कुसुमसेन ?
ऊपर ही बैठा है आम्रा के सग-सग
पी रहा सुरा
दासी अपनी रानी के कानो मे कुछ कहने आई है !
आ गया आज प्रिय चन्द्रकेतु
हो गई देर इसलिए कि
चाचा स्वर्णभद्र मर गया हाय !
खुशियाँ भी गम को सग लिए आई घर में
लेकिन अनग आँखो को अन्धा कर देता
सूने तरु मे भी तो सुगन्ध है भर देता !

आम्रा मुस्काने लगी
प्यार को और जगाने लगी
अरे, पीने ही नही लगी केवल
वह बहुत पिलाने लगी
झूमकर सचमुच गाने लगी
चॉदनी मे इतराने लगी
भृकुटि को खूब चलाने लगी !
तभी तो
कुसुमसेन भी झूम उठा
वेहोश जिन्दगी को उसने भी चूम लिया
आम्रा ने भी सोचा कि यहॉ से जाए तो,
नाजुक घडियो मे कुछ तो करना पड़ता है
यो भी मजाक मे हँसकर मरना पडता है !

सो गया वही पर कुसुमसेन
आम्रा मन ही मन क्रोध कर रही है उस पर—
क्या यही रात भर सोएगा ?
सच है शराब है बुरी चीज
पी लेने पर,
चेतना तुरत मर जाती है !
चन्द्रे ! चन्द्रे !
तू देख इसे,
मै वही जा रही हूँ
रहना अब सावधान !

क्या कुसुमसेन ने बेहोशी मे सुनी वात ?
वह चन्द्रवती को चूम-चूम
ऊपर छत पर है रहा घूम !
क्या देख रहा ?

क्या चन्द्रा ने कह दिया उसे
नारी भी गुप्त रहस्य कहा करती सबको ?
चन्द्रा को रानी से कुछ भी भय नही आज ?
क्या कुसुमसेन का प्रेम बडा आकर्षक है ?
छुप-छुप कर वह क्या दिखा रही ?

है ! राजनर्त्तकी के घर मे है चोर घुसा
वह डाकू है !
कैसे आया इस समय यहाँ ?
समझा !
शेफाली आई थी
कानो मे ही कह गई तुरत
रे, वह तो लिपट रहा उससे !
क्या चूम लिया ?
चन्द्रे ! बोलो, वह कौन दुष्ट ?
हिम्मतवाला, मतवाला कौन युवक है वह ?
ऐसी शोखी ?

डर से चन्द्रा बोली सहसा—वह चन्द्रकेतु !
सुनते ही यह, झनझना उठी साँसे सारी
तलवार म्यान से निकल पडी
गुस्सा से आँखे लाल हो गई क्षण भर मे
सम्पूर्ण जवानी काँप गई यह दृश्य देख
दोनो भौहे तन गई तुरत
उठ गई आग दिल मे सहसा
तलवार ! तुम्हारी जय हो ! मै तो चला, किन्तु
चन्द्रा मे भी कुछ जादू है
पी गई क्रोध वह हँस-हँस कर !

तलवार जहाँ से निकली थी
फिर उसी जगह पर चली गई !
औ' कुसुमसेन सोचने लगा—
आम्रा क्रोधित हो जाएगी
फिर मेरा प्यार
अधूरा ही रह जाएगा
अन्यथा मत्रि-परिषद् से ही मै कह देता !
वैशाली का विधान कितना अनुशासित है
बेचारे को भोगना पडेगा मृत्यु-दण्ड
औ' आम्रपालिका
पदच्युत हो जाएगी !
तुम खुशनसीब हो कलाकार !

चन्द्रे ! चन्द्रे ! आम्रा तो चली गई भीतर !
अब वह भी केलि-महल मे केलि करेगा क्या ?
मेरे हाथो ही इस क्षण यही मरेगा क्या ?

अति कुशल चन्द्रिका लिपट गई
आम्रा के सज्जित आसन पर ही बैठ गई
आकाश देखने लगी तुरत
कितने अच्छे वे तारे है
आ गया चॉद पूरब से पश्चिम अब देखो,
मेरा मोती का हार चमकनेवाला है
आसिन मे भी क्या ओस भूमि पर गिरता है ?
अब आसिन क्या ?
सामने खडा है कातिक भी !
कुछ दिन मे लोग रजाई ओढेगे तन पर
रख लेगे थोडी आग व्यग्र ठढे मन पर !

तुम बहुत निठुर हो कुसुमसेन !
इतना पीकर भी नही बात समझा करते
यौवन अन्धा ही होता है
वह सिर्फ आग देखा करता !
इतना भी शका करता है कोई मानव ?
क्या चुम्बन मे ही सब कुछ बेचा जाता है ?
नारी की भी मर्यादा है
वह पुरुषो से ज्यादा ही सयम रखती है !
वह बहुत सोच कर देखा करती है जग को
वह बहुत समझकर एक बार मुस्काती है !
उसके दोनो चरणो मे घटी लगी हुई
मानव की श्रवण-शक्ति तो पतली ही होती है !

सच है मनुष्य कल्पना बहुत कर लेता है
खाली हाथो मे भी वह कुछ भर लेता है !
हिरणी को विचरण का है क्या अधिकार नही ?
उसकी लम्बी आँखो मे है क्या प्यार नही ?
हे कुसुमसेन !
पहली रानी से यह रानी अति उज्ज्वल है
दोनो आँखो मे निर्मल गगा का जल है !

सुनते-सुनत सो गया कुसुम निर्मलता पर
कुछ सोच रहा है निद्रा की चचलता पर ! —
ओ चोर ! तुम्हारी हिम्मत को मै देखूँगा,
तलवार तूलिका से जाकर टकराएगी
यह आग निकल कर कभी गगन मे छाएगी !
तुम जहाँ रहा करते हो यह मालूम मुझे !

क्या आज भोर होगा न कभी ?
पर चाँद उधर डूबने लगा
डूबा है नही,
विटप के नीचे छुपा हुआ है, इसीलिए
है अन्धकार !
पर तिमिर कहाँ ?
चाँदनी अभी तक फैली है
क्या शरद-पूर्णिमा मे होता है अन्धकार ?
अपमान चन्द्रमा कभी नही सह सकता है
ऊपर ही रहकर भ पर भी रह सकता है !

वह चन्द्रकेतु जब चला गया
चन्द्रा रानी के निकट गई
कह दी सारी बाते मन की
आम्रा ने अपना हार उसे दे दिया तुरत
बोली—अच्छी चन्द्रे मेरी
तू बुद्धिमती हो गई यहाँ !

पर एक प्रश्न मन प्राणो को है हिला रहा—
क्या चन्द्र रह गया प्यासा ही ?
सब कुछ देकर कुछ नही उसे मैं दे पाई
लहरानेवाली हवा न क्यो बह कर आई ?
उसकी आँखो मे क्यो न बहुत लाली छाई ?
मैंने तो वहुत बार ली मोहक अँगराई !
वह सन्यासी ही होगा क्या ?
दाढी रखने के बाद यही तो होता है
कितना कोमल है चन्द्रकेतु !
माधुरी भरी है उसकी वाणी मे केवल

हा! चाचा मेरे चले गए
कितना रोता था चन्द्रकेतु
रूपा बेचारी..........
हाय,
कहाँ वह जाएगी!
जी करता है मै राज-भवन से भाग चलूँ!
मैंने तो इगित किए चन्द्र से बार-बार——
रूपा को तुम देखते रहो!
वह भी तो परम-विचित्रा है
मर गया बाप!
मगल बधन कर सकी नही
एक ही तीर कितने को घायल कर देता
दो-तीन रोज मे जाऊँगी मै भी घर पर
बेचारे मेरे अन्ध पिता भी गुजर गए!
माँ कितनी एकाकी होगी!
चाची रोहिणी बहुत रोती होगी घर मे
मै जाऊँगी!

शृगार कक्ष से आम्रपालिका जब निकली
देखा——बैठा है कुसुमसेन
दोनो के दिल मे अन्तर्द्वन्द्व उठा क्षण भर
पर एक हँसी ने मिटा दिया सब चित्रो को!
नर्त्तकी बोलने लगी हिलाकर एक तार
भैरवी विचरती है वीणा पर मद-मद!

क्या जान रहे है कुसुम आप?
जिन्दगी प्यार का नीड नही
उद्यान एक,

खिलते है तरह-तरह के जिसमे मृदुल फूल
सबसे अच्छी खुशबू है कौन, कहाँ, किसमे ?—
यह कहना है आसान नही
सोचिए जरा,
सब चले गए
पर आप भैरवी सुनते है
किस कठिन परीक्षा से साँसे गुजरा करती !

पर मैने कुछ सपने देखे है हे रानी !—बोला कुमार
तब आम्रपालिका विहँस उठी—
सपने भी सच्चे होते है ?
वीरता भला तलवार छुपाकर रखती है ?
है वही चित्र
जो रहे सामने आँखो के
मेरी कीमत को आप बहुत है समझ रहे
मित्रता इसी को कहते है !
कितना अच्छा है नाम—कुसुम
कितनी सुगन्ध है जीवन मे
मन का दर्पण है मौन नही
वह सब कुछ कहता रहता है !

आम्रा के एक शब्द मे भी सम्मोहन है
वह इतने शब्द कहाँ से बोल गई क्षण मे ?
चाहता यहाँ से जाना है अब कुसुमसेन
पर पागल मन है रोक रहा
फिर भी वह उठकर खडा हुआ
आम्रा ने रख दी एक कली—
उसके कर मे

जिसको वह सूँघ रहा हँसकर
जैसे बच्चा हँस पडता एक खिलौने से !
औ' आम्रपालिका दर्पण मे
अपनी सुन्दरता देख रही
चलते-चलते परछाई उसने भी देखी
कहते-कहते कह गया——
आम्रपालिका
स्वर्ग की देवी है
कैसे वैशाली मे आई
मैं !

अष्टम सर्ग

हे मेघ ! प्राण की धरती पर आया न करो
आकाश सजल यो ही है, तुम छाया न करो !
इस तरह न चमको बिजली, कली सिहर जाती
भीगी पलके भीगी-भीगी ही रह-रह जाती
अब तो सावन का भार न ढोया जाता है
बिखरे मोती का हार न ढोया जाता है !
सुधियो का भी ससार न ढोया जाता है
शबनमवाला उपहार न ढोया जाता है !
अब तरल जिन्दगी बरसाते क्या देखेगी
बादलवाली काली राते क्या देखेगी ?
आकाश घटा को कहाँ-कहाँ ले जाएगा
मेघो के नीचे मन कितना अकुलाएगा !
कितनी मदिरा पीएगी मेरी प्यास अभी
कब तक धरती को चूमेगा आकाश अभी !
जलधार जलद की क्या न बन्द हो पाएगी
झकार दर्द की दिल मे ही रह जाएगी ?
शय्या पर आँसू की कलियाँ बिखराती क्यो ?
मदिरा पीकर भी अब इतना अकुलाती क्यो ?
कौंधती बिजलियो से इतनी घबराती क्यो
कैदी बुलबुल मोती चुन-चुन कर खाती क्यो ?

सुधियो की शुभ्र बलाका क्यो थक जाती है
सखियो के सॅग भी मेघो मे रुक जाती है !
दीपक के नीचे चॉद नही आएगा क्या——
गानेवाली चॉदनी नही लाएगा क्या ?
जिन्दगी एक हॅसती भी है, रोती भी है
दो ही आॅखे जगती भी है सोती भी है !
जलती हूॅ भीतर मे, बाहर मे गाती हूॅ
मै एक साथ ही अकुलाती, अगराती हूॅ !
थकती हूॅ जहॉ वही तुम चरण बढा जाते
दीपक बुझने के पहले इसे जला जाते !
मेरे आगे आवाज एक यो छाई है
क्या यही प्यार की धुॅधली-सी परछाई है ?
उसके पीछे ही आम्रपालिका चलती है
रोशनी स्वय जल-जल कर बहुत पिघलती है !
ओ घटा ! बरस जाना उनकी भी आॅखो मे
बिजली ! तुम भी सो जाना उनकी पॉखो मे !
ओ दर्द ! उधर भी दिल मे कुछ कहते रहना
हे प्यार ! फूल की चोट जरा सहते रहना !
सुनती हूॅ दोनो ओर आग लग जाती है
दोनो लहरे टकरा कर फिर मिल जाती है !
सोने के पिजडे मे कब तक रह पाऊॅगी
कोयल हूॅ मै, अमराई मे भी जाऊॅगी !
झोपडी ! महल मे तेरी बेटी रोती है
हीरे की असह टोकरी सिर पर ढोती है !

जो सिर्फ प्यार का भूखा है वह इन्द्र-महल ठुकरा देगा
गानेवाला पछी सूरज के सिर पर चढकर गा देगा !

दीपक मे भी है आग, पतगे इसे जान कर आते है
जीवन को जीवन नही, उसे तो मरण मान कर आते है !
फिर मृत्यु एक ऐसी समाधि, जिन्दगी जहाँ बन जाती है
खेतो मे हो फिर उपज इसलिए घटा उमड कर आती है !

वैशाली ! तेरी पाली काली घटा घोर
बाहर-भीतर दोनो मे है केवल हिलोर !
आधा हूँ केवल आग और आधा पानी
है एक भाग तो मोम, दूसरा पाषाणी !
इसलिए विचित्रा हूँ, चित्रा हूँ माया की
मेरी नारी प्यारी है अपनी छाया की
अकुलाहट मेरा परिचय है
मेरा जीवन कुछ विषमय है, कुछ मधुमय है !
मेरी तस्वीर बनाना है आसान नही
मै केवल ऊषा-सध्या की मुस्कान नही !
मै जगमग-जगमग रात सितारोवाली हूँ
मै चन्द्रमयी बरसात बहारोवाली हूँ !
मै चचल युवती प्यार-दुलारोवाली हूँ
मै सौ-सौ नही हजार पुकारोवाली हूँ !

वह चन्द्रकेतु ही मेरा चित्र बनाता है
यो, मेरी साँसो मे समस्त भू गाता है !
अपने मन मे ही प्यार समझनेवाली हूँ
लहरोवाली झकार समझनेवाली हूँ !
नर्त्तकी नही, ससार समझनेवाली हूँ
अब कूल नही, मझधार समझनेवाली हूँ !
हूँ भीतर-भीतर बहनेवाली निर्झरणी
ऊपर हूँ ज्वालाओ की शोभित पुष्करिणी !

डुबकियाँ लगाना खेल नही है पानी मे
जहरीली हवा विचरती रात सुहानी मे !
होती है कितनी तेज धार तलवारो मे
अगार निकलता है मेरी झकारो मे !
है खेल नही आँखो को हार पिन्हा देना
है बडा कठिन दिल मे कुछ दर्द जगा देना !
ओ कुसुमसेन ! तुम दीपक मे जल जाओगे
अपने घर मे भी जाकर तुम अकुलाओगे !
रोएगी वधू बिचारी, सिर को फोडेगी
दुख-भरी जिन्दगी सासो को झकझोरेगी !
उसके सुहाग पर तुम न साँप को धरो कभी
मदिरा पीकर इस तरह न तम मे मरो कभी !
दीपक के नीचे बहुत अँधेरा होता है
सध्या मे भी क्या कभी सवेरा होता है ?

सुनसान निशा मे अनायास रूपा आई
औ इधर आम्रपाली पीकर
बेहोश पडी है बिस्तर पर !
दिन भर सावन की घटा बरसती रही मगर
अब गरज रही !
आनन्द-भवन मे भी झोके आ रहे अभी,
है गूँज रहा मल्हार मेघ,
नीचे चन्द्रा मालती लता को देख रही भीगी-भीगी !
यूथिका खिली है गुच्छ-गुच्छ
लहलहा रही उसकी इच्छा इन फूलो पर !
देखा उसने रूपा को आती हुई इधर
सोचने लगी—प्रहरी कैसे पहचान गए ?

चन्द्रा रूपा को लिए केलि-गृह मे पहुँची
उसका उजला परिधान तनिक भीगा-सा है !
आग्रह करने पर भी न पहनती नया वस्त्र
सुन रही बीन के बोल
अधर पर एक व्यग्य हँस रहा स्यात
जो उसकी आँखे बता रही है मन्द-मन्द !
गभीर, अचचल यौवन लगता है अथाह
है रुका हुआ मन का प्रवाह !

चन्द्रा बाहर आई
लहराई हवा एक,
देखा कि कुसुम आ रहे इधर
वह दौड पड़ी खुद द्वार-निकट
उस मौलसिरी के निकट जहाँ काली छाया है घनी-घनी
उँगली पर उँगली चढी हुई है,
बोली चन्द्रा—रानी शयन-कक्ष मे है !

सुन कर इतना
क्या जाने क्यो वह लौट गया
रथ दूर-दूर जब निकल चला
कुछ सोच उठा,
वह फिर लौटा,
फिर चला गया
है वधू बहुत बीमार आज !

चन्द्रा के कहने पर रूपा ने खाया भी,
फिर आई सोने के गृह मे,
दासी चाहती कि बात करूँ

पर उचित नही वह समझ रही
हो गई देर
है बरस रहा पानी झर-झर
घन के गर्जन से विद्युत उठने लगती है।

चन्द्रा आम्रा से मिली तुरत
यह सोच कि रानी जागी है।
सुनकर रूपा-आगमन
तुरत नर्त्तकी उतर आई नीचे
धड - धड - धड - धड - धड
दो बहन गले से मिलकर हर्षित हुई, किन्तु
दोनो की आँखे पिघल गई ।
बचपन के सारे चित्र कल्पना मे आए
अमराई, नदी किनारा, हिरणी, धूल-फूल।
जाने क्यो बुझती बत्ती भी हो गई याद !

"दीदी अच्छी तो हो घर मे।"—बोली आम्रा !
"हाँ अच्छी हूँ, सब अच्छे है।"
"औ' चन्द्रकेतु ?"
"वह भी, लेकिन "

रूपा मदिरा की गध जरा पहचान गई
सोचने लगी—क्या दुनिया है।
आम्रा रूपा को समझ गई
सोचने लगी, क्या जीवन है।

रूपा बोली—दीदी, जाओ, तुम सो जाओ,
हो गई अधिक है रात
बात होगी कल भी।

चन्द्रा अब गृह से चली गई
नर्त्तकी सोचने लगी बहुत
फिर चली गई धीरे-धीरे ।
दासी अचरज से उँगली मुख मे रख लेती—
यह कैसी जटिल पहेली है
यह कैसी विकल सहेली है ।

तूफान छुपाकर क्या होगा
भीतर-भीतर ही दिल मे वह
अरमान छुपाकर क्या होगा ?
कुछ दिन ही हुए, वहाँ से रानी आई है
फिर कैसी बदली छाई है ?
रूपा की माँग भला सूनी क्यो रहती है ?
वह मन की बाते नही किसी से कहती है ।
कोई चचलता नही प्राण मे भरी हुई
कोई सूई है शायद दिल मे गडी हुई ।
मुझसे भी कहती तो कुछ तो मै कर पाती
मेरे उपाय से कुछ भी तो वह मुस्काती ।
रानी की दीदी है कितनी इज्जतवाली
आँख उसकी है बडी-बडी काली-काली !
कोई कुमार उसकी छवि पर मर सकता है
कोमल रूपा का निर्मल कर धर सकता है !
क्या कमी उसे ?
रानी सौ-सौ हारो को भी दे सकती है
दीदी की किश्ती लहरो मे खे सकती है !
कितने कुमार आते है मदिरा पीते है
आखिर हसीन आँखो के हित ही जीते है ।

रानी आज्ञा दे दे तो फिर मै क्या न करूँ
रूपा जिसको चाहे उसके मन को पकडूँ ।
जीने के लिए बनी जिन्दगी निराली है
क्यो रूपा की अब तक भी खाली प्याली है ।
नारी ही नारी का आँसू पोछा करती
नारी ही तो नारी के दुख को है हरती !
रानी कह दे तो आसमान छू सकती हूँ
उनके कारण ही तो मै भी लू सहती हूँ !
उनके कारण क्यो ? प्यास सभी को जगती है
किसकी सुन्दरता मे न अरे लू लगती है ?
साँसो की खुशबू प्राण-प्राण तक जाती है
कोकिला किसी के कहने पर क्या गाती है ?
यौवन के वन मे हवा बहुत लहराती है
परछाई आँखो मे खुद ही तो आती है !

हो रही सुबह,
पावस की पाँखे फैल रही
फिर भी सूरज की किरण दिखाई पडती है !
नर्त्तकी-भवन मे मन्द-मन्द
भैरवी सुनाई पडती है !
आम्रा से रूपा कहती है—
हे बहन ! अकेली हूँ अब मै घबराती हूँ
कह-कह कर भी मै बार-बार शरमाती हूँ ! ......

लज्जा की कोई बात नही
चाहो तो यही रहो दीदी !
पच्चीस दासियाँ सेवा मे प्रस्तुत होगी !

यह स्वर्ग-भवन
ये बाग
क्या नही है बोलो ?
हर घडी सुखद-सगीत,
प्रीत की बाते ही तो होती है !
इस कला-भवन मे दिवस नही
राते ही केवल होती है !
इससे ज्यादा सुख कहाँ मिलेगा धरती पर ?
वैशाली का शृगार यही पर रहता है
आनन्द-पवन ही बहता है !
दुख यही भुलाया जाता है
जिन्दगी चहकती रहे अवस्था के गृह मे
ऐसा ही केवल गीत सुनाया जाता है !
देखो, इसकी सुन्दरता तो देखो, दीदी !
उर्वशी अगर आएगी तो सकुचाएगी
वैशाली से वापस न कभी वह जाएगी !
यदि इन्द्र कही आ गया यहाँ
वह यही बास कर जाएगा
या
सुन्दरता को हर कर ही ले जाएगा !

रूपे, मै भी एकाकी हूँ
तुम साथ रहो,
मेरी निर्मल धारा पर तुम भी साथ बहो !
क्या करूँ ?
उसे तो कहा बहुत
पर चाँद न भू पर आनेवाला है दीदी !
तुम मुझे दोष मत दो

आम्रा निर्दोषी है—
मेरे प्राणो मे अब न बहुत बेहोशी है।
दर्दो को मै सह सकती हूँ
एकाकी भी रह सकती हूँ।
सह लेती हूँ अपनी पीडा
ख्यालो मे ही
करती रहती हूँ मै क्रीडा।
अब आम्रा नही अधीरा,
यह गभीरा है।
पीडिता नही, अब स्वय सत्य की पीडा है।
किस्मत से हूँ नर्त्तकी
बनूँ दुलहन कैसे ?
वैशाली मे हूँ कैद
भला लौटा लूँ वह बचपन कैसे ?

रूपा गुमसुम-सी रही,
नयन ही पिघल गए
आवाज नही आई कोई
वह मौन रही
निस्तब्ध प्राण नि शब्द रहे।

दोपहरी मे,
आम्रा उदास हो गई बहुत
जब चली गई घर से रूपा
चन्द्रा को देकर पत्र एक
सध्या मे जिसको आम्रपालिका पढ लेगी।

आई सध्या,
पहली बत्ती जल गई

एक बिजली चमकी !
फिर हुआ एक गर्जन भी काले बादल का !

वीणा मे सध्या राग ठोकरे दता है,
नर्त्तकी कर रही सुरा-पान,
प्राणो की पीडाओ मे खुशियाँ गमक रही !

चन्दा आई,
दे दिया पत्र
आँखे दौडी
सूरत उदास हो रही शब्द की ज्वाला से
जिन्दगी लडखडा उठी तुरत
आम्रा जमीन पर गिरी
और चन्द्रा ने उठा लिया रोकर !

कुछ होश हुआ
रथ आ पहुँचा
आम्रा सवार हो गई
तीन दासियाँ चली है सग-संग
दौडे घोडे
घन गरज रहे
पर बरस नही पाते कुछ भी !
है अन्धकार
रथ मे बत्ती है लगी हुई
आम्रा चुप है
दासियाँ स्तब्ध
क्या हुआ आज ?
ऐसा न कभी भी हुआ कभी !

मेरी दीदी !
रूपे दीदी,
मै आती हूँ,
बिछुडे को गले मिलाती हूँ
घबराना मत
मै पैर पकड लूँगी उसका
वह बात मान लेगा मेरी
है कलाकार
कीमत को निश्चय समझेगा
फिर मै जो हूँ।
दे दूँगी अपना प्यार स्वय
है साफ हृदय
आँसू पीकर रह जाऊँगी
जीकर मर जाऊँगी यो ही
तुम जहर नही पीना दीदी।
ऐसा तुमने क्यो सोच लिया
क्या समझ लिया
मै समझ रही
वह दर्द
प्यार की चोट
प्रतीक्षा इतनी भी क्या होती है ?
अब मत रोओ
खुशियो से अपना मुख धोओ।
मै स्वय पोछ दूँगी आँसू
मेरी दीदी
मत हो आकुल
मत हो व्याकुल
नारी हूँ मै

नर्त्तकी नही समझो केवल
दिल भी तो है
आँसू भी है
मत हो उदास
मत हो निराश
आशा पर मानव जीता है
इसलिए सुरा भी पीता है !
आ गई बहुत ही दूर
राह थोडी बाकी
थक गए अश्व है नही अभी
बस उसी चाल से जाते है
मेरे भय से सारथी
बहुत है काँप रहे
मै आती हूँ
तुम जहर नही पीना दीदी
मेरे आने तक
तुम निश्चय जीना दीदी !
रूपा ! तुम परम अनूपा हो
नम्रा, शीला, मृदुभाषी, विश्वासी कितनी !
निर्मल नारी
प्यारी मेरी
तुम मरो नही
जिन्दगी नही सीधी होती
दिल को दिल ही समझाता है··· ··!

आम्रा के आने के पहले जल उठी चिता
उस वेगवती-तट पर उठती है एक लपट
क्या सच्चा प्यार जला करता ?

जीवन निश्चय जल जाता है।
चल रही हवा ठढी-ठढी
लग रहा जाड
तब तो बेचारा चन्द्रकेतु
तापता चिता की आग।
उसी के द्वार-निकट
रूपा की मृत्यु हुई सहसा
वह नही पहुँच पाई घर मे
उसके कर मे रह गया पत्र—
हे चन्द्रकेतु।
पी गई जहर
उठ रही लहर
सिन्दूर सग मे लाई हूँ
तुम सूनी माँग जरा भर दो।

जल रही चिता
रूपा की आत्मा कहती है—
हे प्राणनाथ!
मजिल को मेरी उगलियाँ छू सकी नही
तुम खुद आए
मरने के पहले देख लिया मैने सब कुछ
सिन्दूर-शोभिनी हूँ स्वामी!
तुम काँप रहे थे प्राण।
किन्तु मेरी दुनिया मुस्काती थी
अब भी तो मै मुस्काती हूँ!
जिन्दगी हँस रही ज्वाला मे
जब तक न राख ठढा होगी!
मै हँसती ही रह जाऊँगी

जीवन भर रोती रही
आज भी नही हँसूँ ?
आम्रे ! तू भी आ गई यहाँ,
तू क्यो आई ?
नर्त्तकी-भवन को अपमानित मत कर आम्रे !
वैशाली की गणिके !
मत रो, मत रो इतना
मैं तुझसे नही रुष्ट हूँ री !
तू तो छोटी है बहन
बहन के लिए बहन सब कुछ करती !
आम्रे ! आम्रे ! तू कितनी अच्छी है आम्रे
तू वैशाली से वेणुग्राम मे आई है !

नवम सर्ग

भगवान बुद्ध
क्या मेरी आम्र-वाटिका मे आए ?
किसने कह दिया तुझे चन्द्रे ?
क्या मुझमे इतनी शक्ति छुपी ?

सच है, सुन्दरता भी प्रकाश को ला सकती
परछाई भी तो बहुत दूर तक जा सकती !
हे देव ! तुम्हे शत नमस्कार मै करती हूँ
रोशनी ! तुम्हारे सम्मुख तो मै डरती हूँ !
तुम यशोधरा को तजकर हो जानेवाले—
आकर्षण को पैरो से ठुकरानेवाले !
भगवान ! तुम्हारे सम्मुख मै आऊँ कैसे
अत्यन्त सुन्दरी माया को लाऊँ कैसे ?
चाँदनी सूर्य के आते ही छुप जाती है
रोशनी देखकर सुन्दरता शरमाती है !

आकाश ! तुम्हारे पास आग भी रहती है
कहने को है शीतल समीर ही बहती है !
भगवान ! तुम्हारे पास बहुत ज्वाला भी है
ससार नही उजला केवल, काला भी है !

आम्रपाली

नर्त्तकी आम्रपाली रहती अँधियाली मे
मदिरा ढाला करती है अपनी प्याली मे !
भगवान ! तिमिर मे ही तो ज्योति चमकती है
फूलो मे ही तो खुशबू बहुत गमकती है !
सुन्दरता की झकार बहुत मतवाली है
आँखे उजली ही नही, कुछ-न-कुछ काली है !
तुम कैसे हो भगवान, इसे मै जान रही
भीतर ही भीतर कुछ तो मैं पहचान रही !
देखी है मैंने चिता, लाल ही होती है
अँधियाली की जिन्दगी व्याल ही होती है !
तुम तम मत देखो, चाँद-सितारो को देखो
प्राणो मे छुपी समस्त बहारो को देखो !
अब कूल नही, मेरी मँझधारो को देखो
आँसू के मेरे सौ-सौ हारो को देखो !
दिन-रात झर रहे हरशृंगारो को देखो
भगवान, प्रेम के भी उपहारो को देखो !
गीतोवाले मन के त्योहारो को देखो
देवता ! न केवल मदिरा ही देखो मेरी
उन्मत्त लहर से उठे विचारो को देखो !
हे सूर्य ! चाँद की सुन्दरता ही नही सिर्फ
शबनम से भीगे अगारो को भी देखो !
हे ज्योति ! नयन की नही नीलिमा ही केवल
आँखो से बहती जलधारो को भी देखो !
सब कुछ देखो भगवान ! प्राण ही मत देखो
दिल को भी देखो जरा, ज्ञान ही मत देखो
सागर ही नही, लहर मे भी तो जीवन है
अमृत ही नही, जहर मे भी तो यौवन है !

मदिरा पीकर भी एक तपस्या हो सकती
सुन्दरता भी अगारो पर है सो सकती !
मै वन मे नही, चमन मे ही तप करती हूँ
विष ही पीकर अमृत मे सदा विचरती हूँ !
हे बुद्ध ! शुद्ध कोयल के प्राणो को देखो
फूलो की हवा नही, तूफानो को देखो !
तुम राजनर्त्तकी को मत देखो आँखो से
जीवन के सारे अरमानो को भी देखो !
तुम मुझे नही देखो कुछ भी भगवान, किन्तु
मदिरा के मोहक बलिदानो को भी देखो !
वीणा मेरी ढीली है पर झकार नही
मै तिमिरमयी हो सकती लेकिन प्यार नही !
भगवान, तुम्हे आना होगा मेरे समीप
इसलिए कि मेरे घर मे भी जल रहा दीप !
सुन्दरता आमत्रण देगी, तुम आओगे
इस कला-भवन मे तुम भी चरण बढाओगे
चूँमूँगी मै पद-चिन्हो को, मै गाऊँगी
सूरज को भी चाँदनी रात मे लाऊँगी !
अपमान कला का बुद्ध नही कर सकते है
गीतो की मिट्टी पर तो पग धर सकते है
कमलासन पर बैठी वीणा तो गाएगी
रवि की ज्वाला से घटा उमड कर छाएगी !

भगवान ! तुम्हारे प्राणो से मेरी पायल
टकराएगी, टकराएगी, टकराएगी !
भगवान ! आम्रपालिका तुम्हे आमत्रण से
अपने घर मे लाएगी—निश्चय लाएगी !
गीतो मे प्रीत बहुत होती, तुम आओगे

मेरे प्राणो में मन्द-मन्द मुसकाओगे
गर्विनी नही हूँ, किन्तु गर्व तो करती हूँ
सुन्दरता हूँ भगवान महान ! बिखरती हूँ !
अपने हाथो से फूल फेकती हूँ मन पर
अपनी आँखो से जादू करती हूँ तन पर !
आत्मा के दर्पण पर भी जाकर सो लेती
चमकीली चीजो को भी मै कुछ दे देती !
भगवान ! भूमि पर आसमान भी आता है
यो ही वसत प्रति वर्ष नही मुस्काता है !
यो ही मेरी अमराई मे तुम ठहरे हो ?
भगवान ! नही तुम गूँगे हो—तुम बहरे हो
शृगार जरा कर लूँ तो मै अब आती हूँ
सुन्दरता कैसी होती है दिखलाती हूँ !
सुनती हूँ, तुम तो सदा ध्यान मे रहते हो
अधखुले नयन से ही तो सब कुछ कहते हो !
सुन्दरता भी पूरी आँखे खोलती नही
मुस्काती है केवल, खुलकर बोलती नही !

भगवान ! सत्य ही तो सुन्दर हो जाता है
सच है, प्राणो मे कलाकार खो जाता है !
नारीश्वर हे प्रिय अर्ध ! तुम्हे शत-शत प्रणाम
स्वीकार करो आमत्रण हे निर्मल अकाम !
आम्रा पवित्र कर लेगी अपने जीवन को
तुम जरा देख लो खिली पद्मिनी-यौवन को !
मै आती हूँ भगवान, तुम्हे आना होगा
इस कला-भवन मे कल तुमको खाना होगा !
सुनना होगा मेरी वीणा के मधुर बोल
देखना तुम्हे होगा मन को निज नयन खोल !

ओ दर्पण, तुम कहते हो मुझको जाने को
जाऊँ अपनी चाँदनी वहाँ फैलाने को ?
चन्द्रे ! मेरा शृगार हुआ कैसा बोलो
मुस्काती क्यो है मूर्ख ! जरा मुख तो खोलो !
भगवान-निकट जा रही आज यह सुन्दरता
अम्बर पर चढने जाती है यह प्रेम-लता !
देखो बहार की कली गमकती है कि नही
मेरी सुन्दरता खूब चमकती है कि नही !
मै छू सकती या नही सितारो को कर से
क्या चाँद बहुत अच्छा है मेरे इस घर से ?

भगवान ! आ रही हूँ रहना अब सावधान
कह देना शिष्यो से कि न देखे नयन-बाण
वैशाली की एकता आम्रपाली मे है
नीला-नीला आकाश इसी लाली मे है !
मै हूँ शराब, प्याली मे छलका करती हूँ
सौ-सौ कुमार पर एक साथ ही मरती हूँ
मै नही चाहती आँधी उठे सितारो मे
पत्थर भी प्यासा हो उन्मत्त बहारो मे
डूबे न हिमालय कही सिन्धु मँझधारो मे
भगवान ! किश्तियो को मत रखो किनारो मे !
तलवार रूप की बडी निराली होती है
सुन्दरता की राते भी काली होती है !
मै नही चाहती हवा उडे इन साँसो की—
लहरे टकराएँ कभी प्राण उच्छ्वासो की !

भगवान ! आम्र का चित्र मगध मे बिकता है
मेरे समक्ष कोई न कभी भी टिकता है !

तुमने यशोधरा ही देखी है मुझे नही
सूरते नही मिलती मुझ जैसी हाय, कही !
भगवान न सूरत ही हूँ, मै सीरत भी हूँ
नर्त्तकी नही केवल, नारी उन्नत भी हूँ !
आती आँधी, अमराई तुम डोलना नही
ओ सोई मजरियाँ ! कुछ भी बोलना नही
बिजली की एक चमक से पत्ते हिलते है
झोके खाकर ही तो गुलाब भी खिलते है !
मै आती हूँ भगवान, चाँदनी रातो मे
आमत्रण दूँगी केवल दो ही बातो मे
सुन्दरता चुप ही रहती है, बोलती नही
कलियाँ दिलवाला राज कभी खोलती नही !

मै चली, हवा है कसम तुम्हे, मत लहराना
चाँदनी देखकर फूल न उतना अकुलाता !
मेरी बहार ! तुम यही रहो मै आती हूँ
आँखो मे केवल घटा छुपाकर जाती हूँ !
भगवान बुद्ध को धोखा कभी न दूँगी मै
मस्तक पर केवल चरण-धूलि भर लूँगी मै !
रख दूँगी अपना फूल रोशनी के आगे
खो गए कही मेरे चचल मन के धागे !
इतनी सुन्दरता क्यो मै लेकर आई हूँ
खुद-ब-खुद रूप के रस मे ही लहराई हूँ !
क्या करूँ कहाँ रख दूँ मै अपनी माया को
सब देख लिया करते है अपनी छाया को !
क्यो ऐसी आँख मिली कि पंख उड जाते है
एक ही दीप से लाखो दिल टकराते है !

भगवान! रूप को सीमा मे अब रख देना
सुन्दर चित्रो के समय नीद यो भर लेना
आती हूँ अमराई मे, अब क्या होता है
उस जगह कामदेवता कही पर सोता है!
सुन्दरते! अपनी बाँह वहाँ मत फैलाना
भगवान स्वय आए है, तुम मत मुसकाना!
आखिर शोभा की भी मर्यादा होती है
पत्तीवाली टहनी पर कलियाँ सोती है!
लेकिन सुगन्ध को कैसे रोक सकूँगी मै
उस अमर लहर को कैसे टोक सकूँगी मै!
अब तो मै भी आ गई, भीड कितनी आई
ऐसी खुशियाँ तो यहाँ नही अब तक छाई!

चन्द्रे! रथ से अब उतर
बुद्ध-आज्ञा ले आ
मै रथ पर तब तक बैठी हूँ
देखना भीड मे कही न खो जाना कोयल!
देवी वसन्त मे वक्ष देखती चलती है!

भगवान बुद्ध के सम्मुख चन्द्रा चली गई
उपदेशपूर्ण वे ध्यानमग्न
आनन्द श्रवण-अमृत-सिचित
सैकडो भिक्षु एकाग्र चित्त से स्वर-विभोर!

चन्द्रा हँसती आ रही
तथागत ने अपनी स्वीकृति दे दी
तब राजनर्त्तकी आम्रपालिका पहुँच गई
कोलाहल-सा मच गया दर्शको के मन मे

वह चरण छू रही मस्तक से
लगता है जैसे चाँद अस्त हो रहा और
चाँदनी घटा मे समा रही
जिसको सब देख रहे दृग मे
सुन्दरता का प्रतिबिम्ब पड रहा प्राणो पर!
आकाश दूर से ही बहार को देख रहा
रसभरी धरा पर वह न कभी आ सकती है
फूलो पर क्या पत्थर चढकर गा सकता है।
पर पाषाणो पर भी तो शबनम झरते है

पर किरण सोख लेती उनको
पाषाण बहुत तप जाता है
इसलिए फूल-पत्तो पर ओस चमकते है।
क्या कला बिना कुछ लिए लौट जाएगी हे भगवान, आज?
आम्रा अभिलाषा लेकर ही तो आई है।

भगवान तनिक मुस्करा उठे
आम्रा को दृग से देख लिया
बोले सहसा—"क्या है देवी।"
"मै आमत्रण करने आई हूँ' हे प्रकाश!
नर्त्तकी-कुटी मे कल का भोजन स्वीकृत हो
भगवान कला के गृह को करे पवित्र स्वयं
यह आम्रपालिका किरणे लेकर जाएगी।"

भगवान विहँसने लगे हृदय के भीतर ही
देखने लगे सब भिक्षु दीप्त मुखमडल को!
बोली आम्रा—हे भिक्षु श्रेष्ठ आनन्द!
आप स्वीकार करे वन्दना मौन
भिक्षुक-समेत मेरे गृह को कर दे पवित्र!

आनन्द बुद्ध की आँखो को देखने लगे
मुस्कान एक निकली स्वीकृति की भाषा मे
खिल उठी आम्रपाली अपनी अभिलाषा मे।
चरणो को छूकर चली गई
जाने कितनी आँखो मे छाया पडी एक
हरियाली को भी देख लिया करता विवेक।

नर्त्तकी आज खुद ही रथ को हाँकने लगी
दौडाने लगी अश्व को विद्युत की गति से
चन्द्रा नीचे गिर पडी
विहँसने लगी आम्रपालिका बहुत
वह चढी चोट खाकर लेकिन
मस्तक पर विजय लिए जाती।
जिन्दगी बहुत खिलखिला रही है आम्रा की
वह आँख मूँद कर रथ को हाँक रही, देखो
कितने रथ रथ से टकराते
क्या ज्वार रुका भी करता है
शृगार झुका भी करता है?
आएँगे बुद्ध !—
भला आँधी-सी चलूँ नही
दीपक-सा भी इस समय आज मै जलूँ नही?

क्या है? क्यो रथ को घेर रहे?
मै अभी रुकूँगी नही
राह छोडो कुमार।
सामन्त। आप हट जाएँ
मत्री। आप यहाँ?
क्या कहा?

भला आतिथ्य आम्रपाली देगी ?
मदिरा, मणि से आमत्रण मै बेचती नही !
भगवान बुद्ध मेरे गृह मे ही आएँगे
क्या कला-भवन वैशाली का है गर्व नही
मै परिषद को आमत्रित करती हूँ अमात्य !
सौ-सौ वसन्त-पर्वो से
ज्यादा आनन्दित हूँ मै कुमार
आम्रा अपनी इस कला-विजय को
परिषद् को देगी न कभी !
क्या कहा ?
तथागत मेरी चर्चा करते थे ?
मै धन्य !
उन्होने कहा कि वे आएँगे मेरे ही घर पर ?
छोडिए राह,
कितना प्रवन्ध भी करना है
आज ही निमत्रण-पत्र भेजना है सबको
भगवान ! तुम्हारे लिए स्वय
अपने हाथो से भोजन मधुर बनाऊँगी
माजूँगी जूठी थाल
भवन को खूब सजाऊँगी
गाऊँगी प्रीत-गीत !
सच कहती हूँ आरती उतारूँगी भगवन् !

कितना प्रकाश,
कैसी आभा
कितनी प्रदीप्ति
कैसी है उनकी ज्योति
किरण कितनी है उनके प्राणो मे

मुस्कान,
एक मुस्कान ज्ञान से आती है
रोशनी वहा भी छाती है
देखी मैंने——
गभीर, धीर
विश्रान्त, शान्त
एकान्त मूर्ति कितनी ज्योतित
ज्योतिर्मय महासमुद्र ध्यान मे सदा लीन
कितना प्रवीण तप मे जीवन
आनन्द, महाआनन्द व्याप्त है सभी ओर
आ सकती वहा हिलोर नही
लगता है जैसे शुभ्र भोर
अरुणिमा एक छाई विमुग्ध नीलाम्बर मे
निस्तब्ध चित्र पर एक बूँद आँसू केवल
इतनी करुणा मन की अरुणा
इतना प्रशान्त अन्तरानन्द
सर्वत्र शान्ति, सर्वत्र शान्ति !

भगवान आ गए यहाँ, बिठाऊँ कहाँ उन्हे ?
किस जगह ? यहाँ या वहाँ खिलाऊँ कहाँ उन्हे ?
चन्द्रे ! चन्द्रे ! इस घर मे तो चुम्बन भी है
उस घर मे मेरे आँसू का यौवन भी है !
तो कहाँ बिठाऊँ मै ? प्रकाश है कहाँ-कहाँ ?
मेरी पवित्रता का सुहास है कहाँ-कहाँ ?
उस घर मे चल जिसमे तस्बीरे रोती है
जिन्दगी जागकर जहाँ अकेली सोती है !
सब आए पर वह चन्द्रकेतु आ सका नही
भगवान कहेगे क्या ? मन तो गा सका नही !

वह रहता तो देखता रोशनी जलती है
अँधियालीवाली रात किस तरह ढलती है !
भगवान ! अकेली हूँ भीतर से रोती हूँ
सच कहती हूँ शबनम पर ही मै सोती हूँ !
आकाश मिल गया फिर भी प्यास नही जाती
भगवान ! तुम्हारे सम्मुख भी मै अकुलाती !
यह आग नही बुझनेवाली है जीवन मे
चिनगारी ही चिनगारी है मेरे मन मे !
आ गई रोशनी फिर भी क्यो अँधियाली है
क्यो मेरे दृग की घटा घनी है, काली है ?
झरती अब तक क्यो रह-रह कर शेफाली है
प्राणो मे अब तक जगी नही क्यो लाली है ?

भगवान ! भला तुम से भी प्रेम बडा है क्या ?
मेरा प्रकाश अब तक भी यही खडा है क्या ?
मेरे चिराग मे इतनी है रोशनी भरी ?
अब तक लहरो पर बही जा रही प्रेम-तरी !
मै कब उतरूँगी पार, किनारा है कि नही
मेरी मजिल है गलत कि बिल्कुल ठीक सही ?
क्या लहरो मे ही आम्रपालिका गाएगी ?
मेरी किश्ती ज्वारो से ही टकराएगी ?
भगवान ! कीमती दीपक जलने दो मन का
आनन्द प्राण मे ही रहने दो यौवन का !

तुम चले गए भगवान ? धन्य मै हुई आज
लेकिन सूने ही रहे प्यार के सभी साज !
भगवान प्रेम से बडा नही, मै जान गई
आवाज जिन्दगी की तो मै पहचान गई !

मेरी कोयल रोती ही रही बहारों में
मै ढूँढ न पाई चॉद सहस्र सितारो मे !
इतने दीपक से नही अँधेरा दूर हुआ
सूरज तो आया मगर सवेरा दूर हुआ !
मेरी आँधी वैसी ही तो झकझोर रही—
टूटा-टूटा-सा दिल है, उसको जोड रही !

क्या कहा चन्द्रिके ? हाय, हो गया वह घायल
औ' मै पैरो मे बॉध रही हूँ अब पायल ?
भगवान ! बचाना, उसे तीर किसने मारा
आ रहा जिन्दगी मे ऐसा क्यो अँधियारा ?
यदि कलाकार मर जाएगा तो हाय, हाय
असहाय आम्रपाली होगी निरुपाय, हाय !
चन्द्रे ! यह क्या हो गया ज्योति के आने से
दीपक बुझ जाएगा प्रकाश के छाने से ?
चल, चल, अब इसी समय प्रस्थान करूँगी मै
एक ही चिता पर अब तो वही मरूँगी मै !
मै समझ गई किसने तलवार चलाई है
औरतवाली ही उसकी मृदुल कलाई है !
ओ कुसुमसेन ! धिक्कार तुम्हे, तुम नारी हो
तुम पनघट से आनेवाली पनिहारी हो
तलवार न मन पर विजय कभी कर सकती है
नारी बस एक पुरुष पर ही मर सकती है !

क्या कहा ? बच गया चन्द्रकेतु तलवारो से
तूलिका नही कट सकी प्यार की धारो से ?
भगवान, तुम्हारे आने से फल तो निकला
आँखो मे खुशियो का थोडा जल तो निकला !

शेफाली उस सवाद-पुरुष को ले आओ
मेरे जाने के पूर्व प्रार्थना भी गाओ !
जी करता है कहनेवाले को चूमूँ मै
उसके सम्मुख ही मदिरा पीकर झूमूँ मै।
औ' थूकूँ कुसुमसेन के मुख पर इसी घडी
गुस्सा से आँखे होती जाती बडी-बडी !
आती हूँ तब मै लाली को बिखराऊँगी
मन के चाबुक से दिल पर चोट लगाऊँगी !
नादान पुरुष दुनिया मे सब कुछ करता है
पर नारी पर भी आँख लगा कर मरता है !
आ रही याद उस रूपा की, वह चली गई
अपनी ही ज्वालाओ से कैसी जली गई !

भगवान ! प्यार के लिए जिन्दगी जल जाती
यौवन की रात प्रतीक्षा मे ही ढल जाती !
सच है, नारी से ही मनुष्यता जीती है
अबला आँसू का जहर हमेशा पीती है !
जिन्दगी प्रीत के बिना नही रह सकती है
नारी सौ-सौ तूफानो को सह सकती है !
ससार ! तुम्हे मैने रोकर पहचान लिया
तुम बहुत निठुर हो, इसे आज ही जान लिया !
भगवान, तुम्हारी जय हो, तुम करुणाकर हो
आशा के तुम्हीं प्रभाकर—तुम्ही सुधाकर हो !

दशम सर्ग

तूलिका तोड़ दी चन्द्रकेतु ने एक रोज
वीणा को पटक दिया उसने
लेकिन चित्रो को नही जलाया,—
छोड दिया अपने घर मे!
वह आग सुलगकर वही बुझ गई
क्योकि आम्रपाली चित्रो मे हँसती थी, कुछ कहती थी!

उस कलाकार के अट्टहास से सूरज डूब गया
पूरब से चॉद उगा
वह निकल पडा
जीवन से जलने लगा स्वय
फट गई बुद्धि की भूमि हृदय की ज्वाला से
वह पागल-सा हो गया!
जहॉ रूपा की चिता जली थी
उस मिट्टी पर ही सो गया
रात भर वही पडा भी रहा
ख्याल मे मरकर वह चुपचाप
लाश-सा वही गडा भी रहा!

शमशान प्यार को जिन्दा भी रख लेता है
इसलिए अश्रु मे चिनगारी भर देता है!

पागल मनुष्य के पीछे आग जला करती
दिन मे भी उसके आगे रात ढला करती !
वह कलाकार कुछ हँसता है, कुछ रोता है
कुछ पता नही किस समय कहाँ वह सोता है !
आँखो की याद नही आँखो से जाती है
चिनगारी बुझ-बुझकर प्राणो मे आती है !
राजाओ के इतने आमत्रण आए, पर
जा सका कही भी नही सफल वह चित्रकार
आया था वेश बदलकर उसके यहाँ, किन्तु
तेजस्वी वर्षकार
जब गया हार प्रिय कलाकार की वाणी से
वह लौट गया लेकर पुकार
जिसके नीचे बह रही धार !

किसने कह दिया अरे जाकर आम्रा से भी
हो गया चन्द्र पागल
वह तो अब भाग गया !
क्या राजनर्त्तकी भी पागल हो जाएगी ?
हो रहा युद्ध घनघोर मगध-वैशाली मे
रोती है चन्द्रा बैठी रजनी काली मे !—
भगवान तुम्हारे जीवन मे हो रहा समर
क्यो अन्ध मगध स्वच्छन्द फेकता अग्नि-लहर ?
क्या राजतन्त्र इतना भी क्रूर हुआ करता
क्यो मगध-महासम्राट पाप पर पग धरता ?
भगवान ! तुम्हारे शिष्य आग भी खाते है
ये शान्ति-पुत्र हिसा से प्यास बुझाते है !
वैशाली का यह प्रजातत्र क्यो खलता है
इन्साफ देखकर राजगृह क्यो जलता है !

तूफान ! तुम्हारे पख तुरत झर जाते है
उन्मत्त समीरण अधिक नही रुक पाते है !
जो आग लगाता वही आग मे जलता है
जलनेवाला सूरज जल्दी ही ढलता है !
भगवान ! आग से कहो जरा पानी पीले
मरने के पहले दो क्षण तो यौवन जी ले
गगा के दोनो तटवाले क्यो लडते है
क्यो रक्त-प्यास के लिए इस तरह मरते है !

उस एक तुमुल कोलाहल से
क्यो आम्रपालिका चौक उठी ?
क्यो सिहर उठी ?
क्या वैशाली का वीर समर से भाग रहे ?
क्या हुआ चन्द्रिके ! देख उधर
अश्वारोही आ रहे इधर !
क्या वैशाली की ध्वजा जल गई लपटो से ?
नर्त्तकी-भवन भी घिर जाएगा सैनिक से ?
क्या मगध-मृत्यु को आम्रपालिका
झुककर अभिनन्दन कर पाएगी चन्द्रे !
जा, आग लगाकर रख अपने उस आँगन में
औ' एक पात्र मे गरल घोलकर भी रख दे
मै आग और पानी के बीच खड़ी रहकर
नाटक देखूँगी जीवन का !
मरने के पहले अमर बना लूँगी अपनी सुन्दरता को
परतत्र नही रह सकती कभी कला मेरी
चन्द्रे ! आदेश उपेक्षित कर न आज
रोने का है यह समय नही
खुशियों की ज्वाला सुलगा ले अपने अन्दर

री ! कठिन परीक्षा-वेला मे नारियाँ नही रोया करती !
तू आँसू नही निकाल
काल को आने दे मेरे समक्ष
दोपहरी मे भैरवी आज मै गाऊँगी
पार्वती करेगी ताण्डव-नृत्य मरण-वेला !

तुम कौन ? कुसुम ?
क्या प्राण बचाने आए हो नारी के नीले आँचल मे ?
धिक्कार तुम्हे
लिच्छवी-पुत्र ! धिक्कार तुम्हे
तलवार छुपाकर तुम अपनी नर्त्तकी-भवन मे रख दोगे ?
मदिरा पीने तुम आए हो ?
या वीणा सुनने आए हो ?
बोलो, क्या करने आए हो ?
लडते-लडते ही मरो
न ऐसी नारी भी तुम हो कि चिता मे जल सकते !
तुम-जैसे ही जन-गण स्वदेश को ठगते है !
मदिरा तो तुम्हे पिला देती
पर इसका नशा सम्हाल नही तुम सकते हो !
ऐसी मदिरा हिम्मतवाले ही पीते है
जो मृत्यु हाथ मे लेकर भू पर जीते है !
जाओ हे कुसुमसेन, जाओ,
नर्त्तकी आज अगार छुपाकर बैठी है !

क्या कहा, एक चुम्बन दे दूँ ?
तलवार अगर मै रखती तो
सीने मे उसे लगा देती
पर हाय, भारती बीन हाथ मे रखती है !

लो, चरणो को चूमो
जाओ समरागन मे
मेरे चरणो मे भी सुन्दरता सोती है!
ओ दीवाने कामी!
मेरे पैरो पर मस्तक झुका दिया?
वैशाली, तेरी धरती पर ऐसा भी मानव रहता है?
ऐसे पतितो के कारण ही तो देश कष्ट भी सहता है!
तलवार हाथ मे चमक उठी?
क्या आम्रपालिका की गर्दन ही काटोगे?
नाजुक जो हूँ!
आसानी से होगा यह काम तमाम तुरत
ह ह ह ह!
लो काटो,
मगर न ग्रीवा झुक सकती मेरी
मेरे मस्तक पर कला-मुकुट ही रक्खा है
मेरी ग्रीवा थी झुकी बुद्ध के चरणो पर
भगवान कला पर सिर्फ चरण रख सकते है!
स्वर्णिम चरित्र का सूर्य हिमालय से सौ गुना बड़ा होता!
मानव का निर्मल प्रेम
प्राण पर भी पैरो को रख सकता!
वासना-पुत्र ओ कुसुमसेन!
काटना चाहते हो मेरी गर्दन तो जल्दी ही काटो
अन्यथा आम्रपाली भी है कुछ सोच रही
आँगन की मेरी आग प्रतीक्षा करती है
प्याली मे अमृत भी है कबसे भरा हुआ!
तलवार म्यान मे चली गई?
तब तो बिजली लग गई तुम्हे
तुम जाते हो हे वीर?

इधर आओ मै जरा तिलक कर दूँ
घबराओ मत तुम,
युद्ध-काल मे रक्त-तिलक ही लगता है।
जाओ, लाली रक्खो मेरी वैशाली की
कब से सामन्तो को मै इगित करती थी
शत-शत प्राणो मे चिनगारी ही भरती थी।
मदिरा-सेवक तलवार सुलाकर रखते है
सुन्दरता मे वीरता भुला कर रखते है।
भगवान! आम्रपाली की इज्जत रख लेना
मरने के पहले मौन अमरता भर देना
है! महामात्य?
इस समय आप इस जगह यहाँ?
क्या कहा?
शत्रु आ गए अर्ध वैशाली मे?
मै भाग चलूँ?
यह कभी नही होगा प्रवीर!
यह आम्रपालिका कायरता को नही जानती जीवन मे
झुक सकती है वैशाली की वह राजनीति
पर कला नही
लिच्छवी झुका सकते है अपने झण्डे को
पर राजनर्त्तकी नही झुकाएगी अपनी वैशाली को
जाइए महामत्री रण मे
मेरी चिन्ता क्यो हुई?
देश की मर्यादा रखिए अमात्य!

मत्री तेजी से चले गए
औ, आम्रपालिका विहँस उठी
वह स्वयं व्यग करती है अपने जीवन पर

मदमाते उन्नत यौवन पर
सुन्दरता की कीमत है सचमुच बहुत बडी
आदमी मृत्यु-वेला मे भी
इससे न दूर हो पाता है
सौन्दर्य वहॉ तक जाता है
क्या वैशाली से आम्रपालिका सुन्दर है ?
कितने अन्धे है लोग
रोग यह कैसा है मानवता का ?

नर्त्तकी कक्ष मे विचर रही
खिलखिला रही, गुनगुना रही
वीणा के तारो को छूकर यो बजा रही
शेफाली बाहर खडी-खडी कुछ देख रही
घिर गया नर्त्तकी-भवन सॉझ से पहले ही !

वह कौन आ रहा इधर अभी ?
आम्रा क्यो मदिरा-पात्र हाथ से उठा रही ?
वह बोल रही—क्या है सैनिक ?
कैदी हो जाऊँ अभी, इसी क्षण तुमसे ही ?
खुद मगध-महीपति यहॉ नही आ सकते क्या ?
कह दो जाकर, नर्त्तकी प्रतीक्षा करती है !
बदी होने के पहले भी
लूँ देख जरा, वे कैसे है

सैनिक चुपके से चला गया
औ' आम्रपालिका के घर मे जल गए दीप
शृङ्गार-भवन से वह निकली
दर्पण के सम्मुख खडी हुई

अधखुले नयन से देख रही सुन्दरता को।
री सुन्दरते। क्या रोती है?
जिन्दगी आज जलनेवाली है
इसीलिए क्या रूठ गई?
सुनती हूँ तेरा मालिक तो अब पागल है
क्या तू ने पागल बना दिया?
तू निष्ठुर है
सुन्दरते। तू तो निर्मम है
तेरे कारण ही रूपा भी जल गई
और अब मेरी बारी आई है
तू जहाँ रहा करती, उसको भी खा जाती
तू जिधर देखती, उधर आग ही छा जाती !
तू पगली है,
अब पागल तेरे पास नही आएगा क्या?
अपना बेसुध सगीत नही गाएगा क्या?
सुन्दरते। तेरे कारण ही तो हलचल है
तूफान उठा करता धरती पर प्रतिपल है !
तू ही माया
औ' महामृत्यु की छाया है !
देखा उस दिन
चाँदनी देखते थे भिक्षुक
आँखो को बचा-बचाकर रखते थे मन मे
कुछ सोच रहे थे अपने सोए जीवन मे !
कामना-तितलियाँ कभी चैन लेती है क्या
छोटी किश्ती लहरे खेने देती है क्या?
आदमी बहुत मुश्किल से निर्मल होता है
जागता जहाँ पर वही तिमिर भी सोता है !

क्या है चन्द्रे !
क्या आग जल गई आँगन मे ?
तू ठहर वही
धीरे-धीरे लपटो को उठने दे ऊपर
साकार मरण आनेवाला है यहाँ अभी
मै स्वय प्रतीक्षा करती हूँ
दो बाते तो कर लूँ उससे
जलने से पहले जरा देख लूँ ज्वाला को
पीने से पहले छू तो लूँ उस प्याला को !

मेरे विचार की छाया तू न समझ पाती ?
छाया की माया कठिन हुआ ही करती है !
तो सुन,
सम्राट मगध के आनेवाले है
वे मेरी आँखो मे कुछ गानेवाले है !
चन्द्रे ! पतग की पाँख बहुत कोमल होती
दिल तो नाजुक ही होता है
फिर क्या कहना !
जिन्दगी आग से बँध जाएगी एक बार
तलवार तोडकर फूल बना दूँगी चन्द्रे !

बस एक फूँक मे ही सुगन्ध-साम्राज्य व्याप्त हो जाएगा !
तूफान जरा आए भी तो
मेरे सम्मुख छाए भी तो
मै देखूँगी
मेरी चमकीली शुभ्र चाँदनी देखेगी—
वासना-ज्वार को आँखो से
सुलगाएगी वह मन्द धुआँती आग रेशमी पाँखो से !

आए मगधेश अजातशत्रु
शत-शत सुन्दरी सेविका के अभिवादित मुख को निरख-निरख
नर्त्तकी-विलास-भवन मे पहुँचे मन्द-मन्द
वैशाली का साकार स्वर्ग हँस रहा दीपिकावलियो से
सम्पूर्ण कक्ष सज्जित है, फूलो-कलियो से
सुनहली-रुपहली शोभा का सुरभित प्रसार
लगता है कोने-कोने मे बिखरा है केवल प्यार-प्यार!
झकार उठ रही एक तरगित माया की
फैली है महिमा सुन्दरता की छाया की!
सम्मुख पुष्पासन पर मदिरा का स्वर्ण पात्र है रखा हुआ
जिसमे छुपकर है बैठी महामृत्यु केवल
पूरब की ओर निहार रहे आरसी मगधपति
और प्रतीची मे पूर्णिमा उगी चुपके
रुक-रुक के ज्वार उठा ऊपर
भू पर क्या लहरे रहती है?
सम्राट, हाथ को बढा रहे उस मदिरा पर
यौवन की बिजली चमक उठी
सौ-सौ अरमानो की कलियाँ यो गमक उठी!
निकली विशालिका आम्रपालिका,
कहा—इसे पीजिए नही सम्राट आप
यह तो साधारण मदिरा है
जीवन इसमे है कहाँ?
बैठिए वैशाली की सुधा स्वय मै देती हूँ
ओ शेफाली! प्रौढा द्राक्षा तो ला जल्दी· ·!

री, गागर ही ले आई
अच्छा ढाल
इधर तो ला······!

दशम सर्ग

सम्राट लीजिए वैशाली का मधुर-मधुर उपहार पीजिए
कहिए कैसी है ज्वाला ?
ऐसी मदिरा क्या मगध देश मे बनती है ?

सम्राट झूमते हुए प्राण से हो प्रसन्न
बोले—अब इससे भी अच्छी मदिरा ..।

क्या राजगृह मे बन सकती है हे नरेश ?
यह दुर्लभ है !
यह आम्रपालिका के घर मे ही बनती है
चाँदनी रात की छाया मे यह सुधा परिष्कृत होती है
इक्कीस पूर्णिमा-किरणो से ही लहर समादृत होती है !

अव सब होगा
हे राजनर्त्तकी !
एक प्रेम की नौका लेकर आया है सम्राट यहाँ
इस पार शुभ्र गगा के तट पर बँधी हुई है वह तरणी
उस पार आम्रपालिके ! तुम्हे ले जाऊँगा
मै वैशाली के लिए नही
नर्त्तकी आम्रपाली के कारण आया हूँ !

हँस पडी चचला
रिक्त पात्र भर गया पुन
आँखो का जादू प्राण-प्राण तक चला गया
सम्राट !
अपावन नही शुभ्र गगा होगी
इसका जल श्यामल कभी नहीं हो सकता है !
अर्थात...? ....?
तेज तलवार जीत सकती है इस वैशाली को

पर नही आम्रपाली को हे सम्राट !
कला के हाथो मे है सूर्य-चन्द्र
देखिए उधर अगार प्रतीक्षा करता है
औ' इधर गरल मे महामोहिनी मृत्यु बाट जोहती
सिर्फ मै ही स्वागत मे यहाँ रुकी,
है राजनीति से युद्ध
किन्तु यह कला मगधपति का आदर तो करती है
मेरी वीणा बजती तो है
मर्यादित स्वर सजती तो है !
सम्राट !
रूप के लिए रुधिर बह जाता है इस धरती पर
मै जान गई
सुन्दरता की कीमत अपनी पहचान गई
मगधेश ! दूसरी बार न सीता जा सकती है लका मे !
परिणाम सभी जानते स्वय
गगा मे व्याल न रखिए हे सम्राट आज
नर्त्तकी प्रार्थना करती है मन-प्राणो से
झरती हैं दया-निर्झरी भी पाषाणो से !
जिन्दगी एक मर्यादा मे ही रहती है
सच्ची सुन्दरता विष का तीर न सहती है
ठुकरा कर अपना प्यार यहाँ मै आई हूँ
चाँदनी रात मे भी प्रभात-अरुणाई हूँ !
वैशाली के ही लिए आम्रपाली भी है
जब तक स्वतत्रता है तब तक लाली भी है !
मर जाएगा जब सूर्य, चाँद क्या आएगा ?
जब हवा नही होगी तो वन लहराएगा ?
सम्राट, देखिए गरल अभी मै पीती हूँ
हूँ कला स्वय, मर कर अमृत मे जीती हूँ !

ऐसा न करो देवी—मगधेश पुकार उठे—
मै मृत्यु नही जिन्दगी देखने आया हूँ
सच कहता हूँ मै तुम्हे मुकुट पर रक्खूँगा
तुम चलो नर्त्तकी मेरे सँग
मै वैशाली को अभी मुक्त कर देता हूँ
नारी ! तुम करुणावाली हो
इस वैशाली की लाली हो
यदि तुम न रोकती तो मै ही विष पी लेता
पर रोक दिया तुमने आकर
सच है, सच्चाई से नारी निर्मला बनी
अपनी पवित्रता से ही तो उज्ज्वला बनी !
सम्राज्ञी ! खुद सम्राट निवेदन करता है
तुम चलो
मगध का सिहासन सूना लगता · !

सम्राट !
दिखाएँ नही स्वार्थ का स्वर्ग मुझे
इज्जतवाली झोपडी कभी जाती न कही
सोने के पिजडे मे कोयल गाती न कही !
मै हूँ स्वदेश की सुन्दरता फूलोवाली
सरिता हूँ सीमित मर्यादित कूलोवाली !
नर्त्तकी !
शुभ्र सुन्दरता को अब मुक्त करो
सीमित मर्यादा से अब जग मे नही डरो !
आकाश न बाँधा जा सकता है बन्धन से
खुशियाँ मिट सकती नही किसी के क्रन्दन से
चलना होगा नर्त्तकी तुम्हे आज ही रात
गगा के तट पर होगा अब नूतन प्रभात !

सम्राट !
जरा आइए इधर
देखिए लपट को, ज्वाला को
सूरज का रथ कितना तेजी से आता है
अब अन्धकार मे भी प्रकाश मुस्काता है !
लाली की डोली पर मै चढकर जाऊँगी
प्रियतम की याद लिए भी कुछ शरमाऊँगी !

इतना कहकर नर्त्तकी तुरत नीचे उतरी
मगधेश उतर आए सर-सर
वह आम्रपालिका लपटो से खेलने लगी
पर,
द्रवित पुरुष ने खीच लिया उस नारी को
केवल बालो की कुसुमित लट जल गई एक
आया विवेक
अभिषेक अनल से करने पर !
वह कौन दूसरी नारी भी थी तुली हुई
क्यो मरने पर ?
चन्द्रा का यह उत्सर्ग प्रेम से बिम्बित है
उसकी पुष्पित वेणी अधरो से चुम्बित है !

एकान्त रात
वीणा अब भी बज रही वही
फिर भी सन्नाटा, एक महासुनसान स्वप्न
जैसे कोलाहल की समाधि पर एक दीप जल रहा स्वय
गिर गया गरल
मगधेश शून्य प्याली को रखते है नीचे
नि शब्द सभी के मुख-मडल

नर्त्तकी तीन चित्रो को देख रही रह-रह
ओ' मगध-महासम्राट देखते शुभ्र चरण
सोचते—
तथागत इसी जगह तो आए थे
औ' मै भी इसी जगह आया हूँ आज यहाँ
कितना अन्तर है आने मे !
आनेवाले तो तरह-तरह से आते है
जानेवाले भी तरह-तरह से जाते है !
भगवान ! तुम्हारी दीक्षा यहाँ मिली तुझको
मिलती न सत्य-प्रेरणा एक-सी ही सबको
मै वैशाली मे नही, आम्रपाली मे हूँ
अब उस लाली मे नही, इसी लाली मे हूँ !
आया था जिस पथ से उससे फिर जाऊँ क्यो ?
इस नई रोशनी मे अन्धेरा लाऊँ क्यो ?

वैशाली ! तुम खुश रहो स्वय मै चलता हूँ
बुझता-बुझता-सा आया था, अब जलता हूँ !
हूँ सिह किन्तु अब हिरण नही मै खाऊँगा
अब सीधे मै भगवान-निकट ही जाऊँगा !
चेतना एक ठोकर लगने पर आती है
लहरे उठती है तभी तटी टकराती है !
भगवान ! क्षमा करना मै सीधा सुन न सका
उपदेशो के प्रिय फूल हाय, यो चुन न सका !
सम्पूर्ण ज्ञान का श्रेय आम्रपाली को है
जीवन-दर्शन का श्रेय इसी लाली को है !

निज रत्न-जटित तलवार नर्त्तकी के कर मे—
रखकर बोले सम्राट—विजय लो हे देवी !

मैं वापस जाता हूँ जीवित वैशाली से
पर एक प्रार्थना करता हूँ—तुम एक बार
हे राजनर्त्तकी, राजगृह मे भी आना !

आऊँगी वहाँ कभी निश्चय
सम्राट ! किसी दिन आ जाऊँगी एक बार !

इतना सुनकर वे चले गए
औ' मुख्य द्वार के निकट
एक पागल का गूँजा अट्टहास !

नर्त्तकी-भवन के मस्तक पर जल उठे दीप
शत-शत झिलमिल, जगमग-जगमग
इन दीपो को आम्रा ने स्वय जलाया है !
सम्राट दूर से देख रहे
औ' पागल राज-मार्ग पर हँसता—
चला जा रहा है दौडा
पहला कोलाहल करनेवाला वही एक !

लहराया मीनध्वज सहसा
नर्त्तकी-भवन पर एक बार
सम्पूर्ण नगर मे विजय-घोष छा गया तुरत
बज उठे शख
बज उठे वाद्य
धीरे-धीरे इस कला-भवन को घेर लिया सामन्तो ने
औ' आम्रपालिका
विजय-खड्ग के ऊपर अपनी वीणा को
लम्बी-लम्बी उगलियो से खुद बजा रही
अपनी स्वतन्त्रता के प्रभात को सजा रही !

सारी किरणे गुनगुना रही
औ' प्रथम-प्रथग
बूढा अमात्य वैशाली का सिर झुका रहा
जिस पर नर्त्तकी चढाती है कामना-पुष्प की पखडियाँ
उल्लसित करो से बार-बार
फिर एक बार उस मुख्य द्वार पर पागल हँसकर चला गया
आवाज यहाँ तक आई क्या ?

एकादश सर्ग

किसकी पग-ध्वनि ?
आहट किसकी ?
तुम कौन, चन्द्रिके ? क्या है री ?—
सुनसान रात मे अर्ध सुप्त नर्त्तकी
मुलायम कम्बल के भीतर से ही सहसा बोली।

हाँ, मै ही हूँ, रानी !
भ्रम से हो गई भ्रमित

किचित यो चकित, सशकित, चिन्तित मुख को तनिक निकाल
आम्रपाली बोली—यह भ्रम कैसा ?
क्या कोई चोर घुसा घर मे ?
इतने दीपक क्यो जलते है ?
क्या घटा घिरी है आसमान मे, आसिन मे ?
बिजली तो कौध रही रह-रह,
चन्द्रे ! समीर भी लहराता है बहुत आज
खिडकी को जरा बन्द कर दे,
झोके से घर की बत्ती कही न बुझ जाए !

गरजो, गरजो हे मेघ,
गरज लो, अब तो मौसम बीत रहा !

छुप जाएगी कुछ ही दिन मे गर्जन-वेला,
आखिर, काले बादल भी तो थक जाते है
नभ के चिराग भी विद्युत से घबराते है!
चन्द्रे! कैसा भ्रम हुआ तुझे?

रानी, बरामदे मे कोई यो गुजर गया!
कालिमा अधिक थी,
इसीलिए काली सूरत पहचान न पाई
दौड पडी पीछे-पीछे
पर निकल गया वह पवन
किधर से किधर गया कुछ पता नही!
रानी, मेरी आँखे धोखा खा गई तुरत,
प्रहरी सोया था,
मैने जगा दिया उसको,
फाटक भी तो था बन्द
स्यात दीवार पार कर भाग गया!
प्रहरी कहता था—
मध्य रात के पूर्व एक पागल भटका-सा आया था
धीरे-धीरे धीमे स्वर से उसने यो ही कुछ गाया था ..

बस कर चन्द्रे, मै जान गई
सपना साकार हुआ मेरा
चन्द्रे, तेरे भ्रम को भी मै पहचान गई—बोली आम्रा।

तो क्या, वे, वे ही थे रानी?
मै चूक गई
मेरी आँखो की ज्योति हो गई मन्द
बन्द अनुभव के द्वार हुए कैसे?

मै ज्वार नही पहचान सकी
चुप रहनेवाली एक मधुर आवाज नही मै जान सकी !
भगवान बुद्ध की छाया है आनन्द
हाय, मै रानी की परछाई भी बन सकी नही !
किस्मत खोटी है, चोटी पर जाऊँ कैसे
है दर्द नही दिल मे, सपने लाऊँ कैसे ?

शय्या पर उठकर बैठ गई नर्त्तकी उदासी लेकर कुछ
सम्मुख चिराग पर एक पतगा जलता है
कोमल-कोमल दोनो पाँखे,
कुछ जली हुई-सी लगती है
फिर भी वह जलता चला जा रहा है कब से
घनवाले दोनो नयन देखते ज्वाला को,
क्या आग और पानी मे कुछ भी समता है ?
शबनम को चिनगारी से इतनी ममता है ?

नीचे वह क्या है गिरा हुआ ?
चन्द्रे, चिराग के नीचे क्या है, देख जरा,
तस्वीर ?
कहाँ से आई यह ?
भगवान बुद्ध का चित्र !
दीप के नीचे भी यह मिली ज्योति ?
सच है, चिराग के नीचे भी रहता प्रकाश
तम से भी तो होता है मानव का विकास !
चन्द्रिके, आज से दीपक नही बुझाना यह,
रवि के आने पर भी न ज्योति बुझ पाएगी
अब आम्रपालिका दूर-दूर तक जाएगी !
ओ चित्रकार ! रगो की भाषा जान गई
भगवान बुद्ध की मजिल मै पहचान गई !

मानवता के तुम अग्रदूत हो कलाकार
तुम जा सकते हो इस धरती के आर-पार !
तूलिका तुम्हारी जीवित है अब तक पागल
आकुल आँखों में छलक रहा है निर्मल जल !
पागल मुश्किल से ही पहचाना जाता है
एकान्त पुरुष लक्षान्त गीत भी गाता है !
प्रियतम ! मुझसे तुम अधिक पवित्र चितेरा हो
मैं चन्द्र-स्नात सध्या, तुम स्वर्ण सवेरा हो !
ढलते-ढलते भी एक रोज तुम आ जाना
मेरे चिराग पर कभी-कभी मुस्का जाना !
मैं रोज प्रतीक्षा की लाली बिखराऊँगी
मन-ही-मन मे आशा का ओस गिराऊँगी !
ओ किरण, गूँथ लेना इन बिखरे फूलो को
हे ज्योति-धार ! छू लेना मेरे कूलो को !
अब वैशाली से बिदा आम्रपाली होगी
अब केवल भीतर-भीतर ही लाली होगी !
हे प्यार ! क्षमा करना अपनी चिर दुलहन को
रोकना नही मेरे इस बहते जीवन को !
मेहदी कभी मेरे हाथो मे लगी नही
बिन्दी सुहाग की मृदुल भाल पर सजी नही !
मैं चिर कुमारिका रही, न माँ बन पाई मैं
हा, एक रात भी नही तनिक शरमाई मैं !
गोदी सूनी ही रही, न मन को चूम सकी
गलबाँही देकर नही किसी दिन झूम सकी !
वैशाली ! मेरी व्यथा किसीसे कहना मत
हे मेरे दर्दीले आँसू, अब बहना मत !
ढल रही जवानी, जीवन भी ढल जाएगा
सागर ही खुद सरिता से मिलने आएगा !

रोकर भी तो जिन्दगी गुजारी जाती है
साँसो की आग सभी को यहाँ जलाती है।
चन्द्रे। मेरे दुख मे भी तू यो रोती है
री पगली, तू क्यो नही रात मे सोती है?
छाया। मेरी माया अब जलनेवाली है
शृगार-निशा जीवन की ढलनेवाली है।
अब चाँद न मेरे आसमान मे आएगा
मन-प्राण-नयन मे मेघ नही अब छाएगा।
आनेवाली किरणे तो आ ही जाती है
जीवन की ज्योति समय पर ही मुस्काती है।
रुकती न विभा की धार तिमिर की सेना से
फिर दूध नही बनता है सचित छेना से।
जिसको जाना है जहाँ, वही पर जाता है,
आना है जिसको जहाँ, वही पर आता है।
जिन्दगी लहर-सी उठती है, फिर गिरती है
अन्तिम अँधियाली ज्योति लिए ही घिरती है।
मरते-मरते भी मानव कुछ पा लेता है
अन्तिम साँसो से भी तो कुछ जगा लेता है!
पानी चाहे जिस जगह गिरे
वह तो समुद्र मे जाएगा
अँधियाला चाहे जहाँ घिरे
आखिर प्रकाश तो आएगा।
जिन्दगी ज्योति से निकल ज्योति मे जाती है
बुझते चिराग को मृत्यु जलाने आती है।
इस धरती मे केवल प्रकाश की लीला है
सूरज से ही तो चाँद बहुत चमकीला है।
चन्द्रे। आँसू भी तो प्रकाश का पानी है
भीतर से आनेवाली करुण कहानी है।

करुणा मे ही अरुणा की वीणा बजती है
सध्या ही छुपकर स्वर्ण सबेरा सजती है।
वह कौन गुहागिन मोती को बिखरा जाती
चुपके-चुपके हर रात सिसक कर गा जाती।
वह कौन विरह-देवता ओस चुन लेता है
चुपचाप एक आवाज रोज सुन लेता है!
चन्द्रिके। जिन्दगी भी जानी-पहचानी है
शबनम भी किरणो की ही एक कहानी है!
हो गया भोर, चल नई सुबह देखूँ कैसी
ऊषा भी सुन्दर लगती है अब मुझ जैसी।
बुझ रहे सितारे मेरे बीते दिन जैसे
सपने भी दुनिया मे आते कैसे-कैसे।
अँधियाली मिटने पर उजियाली आ जाती
रोशनी एक बुझती कि दूसरी छा जाती।

चन्द्रिके। आम्रपाली क्या वैशाली मे है?
सामने देख, नर्त्तकी उसी लाली मे है।
प्याली निकलेगी अभी मदिर किरणोवाली
फट जाएगी अब कुहा-कली काली-काली।
पीऊँगी अब जल्दी प्रकाशवाली शराब
फट रहा तिमिरवाली मेरे मन का नकाब।
सम्पूर्ण व्योम मे बॉह पसारूँगी मै भी
इस निखिल विश्व को कभी पुकारूँगी मै भी।

चन्द्रिके! किरण के हाथ सृष्टि से लम्बे है
हर दिग्दिगन्त मे चिर प्रकाश के खम्भे है।
पूरब के दर्पण मे मैने मुख देख लिया
जो किया जगत मे गलत नही, सब ठीक किया।

पाँखे बढने पर ही पछी उड जाता है
तम के आने पर ही प्रकाश अकुलाता है।
विश्वास समय पर ही पहचाना जाता है
दीपक लेकर ही तम को जाना जाता है।
चन्द्रे। मै अब से भूल रही श्रृगार-प्यार
दर्पण से कह दे अब न आम्र की छवि निहार।
किश्ती मेरी अब देख रही अपना किनार
झकार, शेष झकार रह गई उसी पार।
कह रहा ज्ञान, मेरा सारा ससार गेह
बस एक स्नेह, बस एक स्नेह, बस एक स्नेह।
एकान्त शान्ति-सगीत व्याप्त है सभी ओर
मन-नयन-गगन की दिशा-दिशा मे है अँजोर।

क्या कहा ?
बुद्ध भगवान पुन आए
छाए मेरे सपने साकार आज।
चन्द्रे। नाई को बुला,
बाल का बोझ गिरा दू धरती पर
आकाश उठाने मे दिक्कत हो रही मुझे।
पीले वस्त्रो को आज पहन कर भी देखू,
बस एक बार दर्पण के सम्मुख जाऊँगी
ला जरा बीन, अब एक गीत ही गाऊँगी।

दोपहरी से पहले ही सिर के केश कट गए आम्रा के,
उत्तुग हिमालय-शिखर स्वच्छ लगता कितना
जब काली-काली घटा बिखर झर जाती है।
ओ दर्पण। चमक बहुत है अब सुन्दरता मे,
शीशा हो, टूट न जाना मन की तेजी से
भिक्षुणी आम्रपाली निहारती शेष रूप।

अपमान नही समझो अपना
इससे बढ कर सम्मान तुम्हारा होगा क्या ?
योगिनी नही गाइना देखती जीवन मे ।
ओ कॉच ! ज्योति से पिघल नही जाना जल्दी
हॅसती-हॅसती वह देख रही !

भिक्षुणी आम्रपाली के पीछे
हॅसती है तस्वीर एक,
क्या वही ?——चन्द्र ने जिसे बनाया था मन से ?
चन्द्रिके ! उसे क्यो नही छुपा देती इस क्षण ?
उपहार नही वह, स्वय प्रेम की छाया है,
माया है, माया है चन्द्रे !
सूरज के सम्मुख चॉद नही आ पाता है
लाली की लीला मे न कुमुद मुस्काता है !

हाहाकारो से गूँज रही है वैशाली,
जा रही आम्रपाली पैदल प्रभु से मिलने
धीरे-धीरे मन-कमल लगा हिलने, खिलने,
भगवान बुद्ध प्रस्फुटित नयन से देख रहे !
आश्चर्य-चकित आनन्द, भिक्षु, जन-गण समस्त
सौन्दर्य अस्त हो रहा किरण, है प्रखर व्यस्त,
हस्त से चरण छू रही अभिलाषा
चेतना-मस्त माधुरी रूप की बिखर रही !
भगवान ! प्राण हो गए शुद्ध
अवरुद्ध राह अब नही, बुद्ध !
दो ज्योति-दान, दो ज्योति-दान
नारी को मुक्त करो,
बिखरो हे प्रभा-पुज,
फैलो, फैलो हे किरण-कुज !

लौटी यशोधरा
किन्तु आम्रपाली न लौटकर जाएगी
विश्वास मुझे,
आशा ही आशा है इन प्यासे प्राणो मे
अब वापस जाऊँ कैसे फिर तूफानो मे !
दो शरण,
अन्यथा मरण,
चरण हे ज्योतिर्मय !
मैं सदा विजय ी करती रही,
सही अब जीत ढूँढने आई हूँ
भगवान नग्न सुन्दरता की अब लाज रखो !

क्या कहा महा आनन्द ?
सघ मे नारी का है स्थान नही ?
माता का क्या कोई अस्तित्व नही जग मे ?
भगवान ! सत्य के लिए न्याय मै माँग रही
नारी अपनी मर्यादा लेने आई है,
भगवान राम के लिए गई वन मे सीता
गण-तत्रराज्य की नारी ही
हक माँग रही है आध्यात्मिक
मेरी इच्छा मे सत्य छुपा है हे प्रबुद्ध !
मेरी भाषा मे कोटि-कोटि नारियाँ छुपी
मै एक नही,
हूँ मै अनेक
गीता का अर्जुन कोटि पुरुष का है प्रतीक
हे शान्ति-देव ! नारी अशान्त क्यो रहे ?
इसे भी दो प्रकाश
करने दो इसको भी विकास ...!

स्वीकार ?
तथागत ! प्रार्थना स्वीकृत हुई ?
उठा लूँ चरण-धूलि !
प्रभु ! नमस्कार है बार-बार !

चन्द्रे ! तू वापस जा निज घर
रो मत देवी,
रो मत देवी,
उस कला-भवन की मर्यादा अब तुझ पर है !
देखना कालिमा घुसे नही,
विजयी मीनध्वज झुके नही,
अब बुझे नही जलता चिराग
मै तो विराग ले चुकी
कभी भिक्षा लेने मै आऊँगी !
उस समय न आँसू बिखराना
मै मोह और ममता से हूँ अब बहुत दूर,
पर क्रूर नही
करुणा तो है
कल्याण प्राण मे है केवल
सन्यास दया को नही छोडता है जग मे !

क्या कहा ?
चलेगी सग-सग ?
तेरे उर मे कोई तरग भी नही शेष ?
अब पीत वेश की इच्छा है ?
देखना कही फिर पीछे क्लेश न हो,
फिर मुग्ध देश की याद न आए प्राणो मे
दीपक न कही फिर बुझ जाए तूफानो मे !
कुछ रोज अभी तू सोच,

अगर मन कह दे तो
चलना मेरे ही सग-सग
तू तो सब दिन मेरे ही साथ रही चन्द्रे !
दिन पर दिन बीत गए कितने
अब आम्रपालिका शुद्ध भिक्षुणी ही लगती !
उस पागल का कुछ पता नही, वह कहाँ गया,
कोई भी चर्चा नही कही !
जिन्दगी कहाँ से कहाँ निकल जाती पथ मे
इन्सान यहाँ से वहाँ
वहाँ से यहाँ
पुन वह कहाँ-कहाँ खो जाता है
रोकर, मुस्काकर मिट्टी पर सो जाता है !
उस पागल को क्या कफन मिला या नही कही ?
सभव है, वह भी जीवित हो
जिन्दा रहता तो कभी भटकता आ जाता
उस एक हँसी मे ही अगीत को गा जाता !
जिन्दगी प्यार की, जीवन भर जलती रहती
वह रात याद की, मरने तक ढलती रहती !
ससार एक नाटक-गृह-सा क्यो लगता है ?
मिटता न कभी भी प्राण-दर्द
आदमी खुशी को भले भूल जाए लेकिन
वह दर्द भुलाया नही जा रहा है मन का
इतिहास यही है एक मनुज के जीवन का !
वह चपल किशोरी गोरी
घिर-घिर जाती थी उस वीणा से
अमराई का जीना भी कैसा जीना था !
अन्धा बेचारा कभी सोचता था कि—
जिन्दगी की किश्ती सन्यास-सरित पर जाएगी ?

रूपा जल कर उत्सर्ग करेगी प्राणो को
औ' चन्द्रकेतु भी पागल ही हो जाएगा!
जिन्दगी! तुम्हारी लहर बहुत लहराती है
इसलिए वेदना बार-बार अकुलाती है!
दिल मे दरिया है कहाँ? आग की ज्वाला है
इच्छा का भरा नही, खाली ही प्याला है!
आदमी यहाँ का वस्त्र यही धर देता है
चलने के पहले दो आँसू भर लेता है!
दुनिया मे केवल एक आह रह जाती है
जिन्दगी मृत्यु की धारा पर बह जाती है!
यह मगध-नगर-श्री राजगृह
उत्तुग शैल-दल-मध्य दुर्ग सुविशाल सौम्य
तरु-लता-व्याप्त तलहटी
सघन वन-वीथि विहग-रव से कूजित
अविरल गति से निर्झर-झर-झर
सध्यानिल-हिन्दोलित कोमल पल्लव-मर्मर
सर्वत्र शान्ति-सगीत
पुष्प-सज्जिता पुरा के आसपास ही—
सारिपुत्त का जन्म-स्थान
भगवान बुद्ध प्रिय स्मृति-स्वरूप गिरि गृद्धकूट
जिस पर उनके पावन चरणो के किरण-चिह्न
है भिन्न-भिन्न!
भिक्षुणी आम्रपाली भिक्षा का पात्र लिए
है खडी वहाँ
मगधेश जहाँ,
बोली—सम्राट! याद है कुछ?
मै वचन निभाने आई हूँ इस जगह यहाँ,
दीजिए स्नेह-भिक्षा मुझको!

पहचान लिया, पहचान लिया हे देवि, तुम्हे
शत-शत प्रणाम
चरणो पर मस्तक रख लूँ हे भिक्षुणी आज
साकार ज्योति-माता मेरे घर आई है
उत्सर्ग-अरुणिमा छाई है।
भिक्षुणी! पात्र मे स्वय मुझे ही रख लो तुम
अब और मुझे क्या है जो दूँ इस समय तुम्हे?
आदमी अकेला ही जो कुछ है वही सत्य।
आ रही आम्रपाली पथ से
सध्या का सूरज डूब रहा,
लालिमा व्याप्त है पश्चिम मे
कालिमा पूर्व से फैल रही।
झरना झर-झर झर रहा मन्द
बह रही नदी
तट पर गुलाब के फूल खिले उजले, नीले, पीले
अधिकाधिक लाल-लाल।
रुक गई आम्रपाली सहसा
काँटो मे उलझ गया आँचल
वह छुडा रही!
हँस पडा कौन?
किस पागल का वह अट्टहास गूँजा सहसा?
किसका स्वर प्राणो मे धक्का दे रहा आज?
देखती आम्रपाली उसको
गर्दन भर पानी मे वह पागल नहा रहा,
भिक्षुणी आँख मे दो आँसू है लिए खडी,
नभ मे दो तारे उग आए
वह पागल करता अट्टहास––
कीमती अश्रु को बाहर मत लाओ देवी!

दुनिया देखेगी तो हँस देगी बार-बार
ज्वाला को भीतर ही रख लो
अपनी समाधि
दिल की मिट्टी पर ही बनने दो हे प्रज्योति !
तुम इधर मुझे क्या देख रही ?
तुम तो दो आँसूवाली हो
मै तो निर्झर मे डूबा हूँ,
अब आग नही, पानी ही पानी है जीवन !
क्या देख रही ?
जिन्दगी इसीको कहते है !
जाओ, सूरज भी डूब गया
अब नही उलझ पाओगी फिर तुम काँटो मे
मेरी छोटी आवाज फूल मे बैठी थी !
बस यही आखिरी भेट समझ लो
अन्तिम चित्र बनाकर मै मर जाऊँगा !
मेरे जीवन का एक दर्द
अपनी मजिल को देख चुका,
भिक्षुणी परम पूज्या पावन !
तुम एक बार आ जाना उस अमराई मे
जिसकी छाया शीतल मे मै सो जाऊँगा
उस वेगवती के दक्षिण मे
उजली समाधि पर
एक हँसी की कली गिरा देना चुपके
जिस समय चाँदनी से चू कर
मेरी मिट्टी पर हरसिगार के फूल झरेगे मन्द-मन्द
शबनम से भीगी याद
जिस समय वीणा लेकर बैठेगी !
आवाज भुला मत देना यह,

जाओ लेकिन
भूलना नही, भूलना नही!
भिक्षुणी चली,
भीतरवाली दीपिका जली!
वह पागल मौन रहा क्षण भर,
करना चाहा फिर अट्टहास
पर हँसी कहाँ निकली मुख से!
आँखो मे आँसू भर आए
वह फूट पडा!
रोने मे ही आनन्द आज आ रहा उसे
वह कलाकार अपने मन पर आँसू से ही
एकान्त चित्र को बना रहा
उसके जीवन का यही चित्र क्या
सबसे सुन्दर भी होगा?
भगवान! आम्रपाली से कह देना तुम भी . .
अन्यथा शेष तस्वीर कहेगी अकुला कर——
ससार! तुम्हारा प्रेम हाय, झूठा है क्या?
जिन्दगी! तुम्हारी कीमत कुछ भी नही यहाँ?

अरुण की अन्य प्रकाशित प्रमुख

काव्य कृतियाँ

विदेह महाकाव्य
विद्यापति, सूरश्याम
विश्वमानव, कोशा
सान्ध्या, अशोकपुत्र
अगीता, सगीता आदि ।

प्रेस मे

वाणभट्ट महाकाव्य
पंडितराज
चडीदास की प्रेमिका
महाचाणक्य (नाटक)
प्रकाश की खोज (नाटक)
मयूरपत्र (कविता-सग्रह)
नालदा की आत्मकथा आदि।

प्रमुख वितरक

राजकमल प्रकाशन दिल्ली
अजन्ता प्रेस लि० : पटना
आधुनिक पुस्तकभवन, कलकत्ता

दिनकर की दृष्टि में अरुण

अरुणजी विद्यापति के गानो से सिक्त मिथिला-मही के पुत्र है और गडकी के तट पर रहते है, जहाँ से गगा बहुत समीप है और हिमालय कुछ दूर । लेकिन यह परिचय कुछ परिचय नही है । अरुणजी का वास्तविक परिचय तो यह है कि तन से हमारे बीच रहते हुए भी मन से वे उस विश्व मे विहार करते रहे है जो विद्यापति और सूरश्याम का विश्व है, जो महावीर और जनक विदेह का विश्व है । इन्होंने कविताएँ बहुत लिखी है और प्राय सभी रचनाएँ प्रकाशित भी हो चुकी हैं किन्तु मर्मज्ञो की दृष्टि जिस प्रकार इन पर पडनी चाहिए उस प्रकार अब तक नही पडी । यह भी अच्छा ही हुआ, क्योंकि इस स्थिति ने कवि के भीतर प्रयास को तेज रखा है और वह दिनोदिन अभेद्य को भेदन की चेष्टा मे सलग्न रहा है । 'कालिदास', 'आम्रपाली' आदि काव्य अभी प्रकाशित हुए है । मुझे स्पष्ट दीख रहा है कि ये काव्य साहित्य-मर्मज्ञो को सतोष प्रदान करेगे और कवि को वह आसन जिसे उसने अपनी प्रतिभा और अध्यवसाय से अर्जित किया है ।

—दिनकर